Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

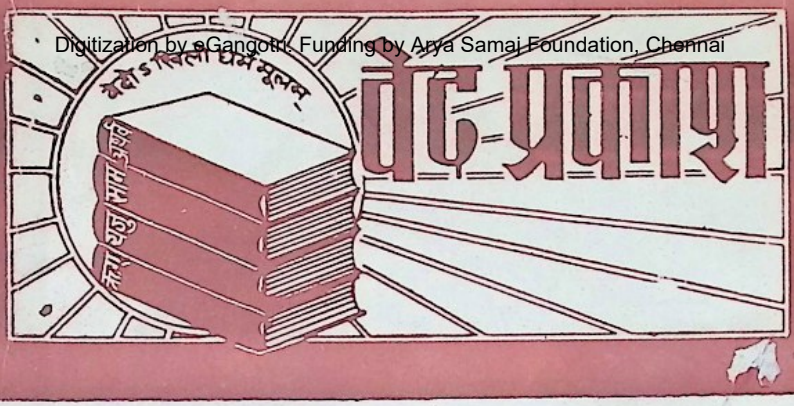

संसार में कैसे रहें ?

इहैवैधि धनसनिरिह चित्त इह क्रतुः ।
इहैधि वीर्यवत्तरो वयोधा अपराहतः ॥

—अथर्व० १८।४।३८॥

हे मनुष्य ! तू इस संसार में धन-ऐश्वर्य का प्रदान करने वाला दानी होकर रह । इस संसार में ज्ञानी और कर्मवीर बनकर रह । इस संसार में अतिबलवान् होकर शत्रुओं से अपराजित रहता हुआ दीर्घायु वाला होकर रह ।

इस संसार में रहते हुए सदा स्मरण रख—

ईशावास्यमिदꣳ सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत् ।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्य स्विद्धनम् ॥

—यजु० ४०।१॥

इस सृष्टि में जो कुछ भी गतिरहित एवं गतिशील है वह सब परमेश्वर से व्याप्त है । जो व्यक्ति परमेश्वर को अणु-अणु और कण-कण में ओत-प्रोत मानता है, वह संसार में पाप नहीं कर सकता ।

मन्त्र में दूसरी बात कही—**'तेन त्यक्तेन भुञ्जीथाः।'** ईश्वर द्वारा दिये हुए पदार्थों का उपभोग करो, परन्तु उनका उपभोग करते हुए उनमें फंसो मत ।

हम सब गौ आदि पशुओं से सम्पन्न गृहों में एक-दूसरे के पदार्थों का लोभ न करते हुए परस्पर मिलकर एक-दूसरे के समीप रहें ।

मन्त्र का अन्तिम उपदेश है **'कस्य स्विद्धनम्'** । अरे यह धन किस का है ? यह धन तो प्रजापति का है । इस धन के पीछे पागल मत बनो, यह तो यहीं इसी संसार में रह जाता है ।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

बोध-कथा

सच्ची गुरु-दक्षिणा !

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने ढाई वर्ष तक गुरु विरजानन्द जी के चरणों में बैठकर अष्टाध्यायी, महाभाष्य, वेदान्त सूत्र आदि अनेक आर्ष ग्रन्थों का अध्ययन किया। गुरु जी ने तत्त्वदर्शी गुरुजनों के हृदयकोश से सुरक्षित अनेक मार्मिक रहस्य भी बतलाए। साथ ही युवाकाल से लेकर गुरुजनों और अध्ययन के फलस्वरूप अन्तःकरण में संचित अमूल्य ज्ञानरत्न भी सौंप दिए। इतने काल का गुरु-सत्संग स्वामी जी के लिए सुवर्ण और सुगन्धि के योग के समान हो गया। गुरु जी के सन्तुष्ट हो जाने पर प्राचीन आर्यमर्यादा के अनुसार स्वामी जी कुछ लौंग लेकर गुरु जी के चरणों का स्पर्श कर बोले—"महाराज, आपने मुझ पर कृपा की, मुझे विद्यादान दिया। मेरा रोम-रोम आपका धन्यवाद करता है। प्रभो, आपका आज्ञाकारी शिष्य श्री सेवा में कुछ लौंग सम्मानपूर्वक समर्पित करता है।"

सन्तान से अधिक परम शिष्य, जिसे उन्होंने शास्त्रीय भेद बतलाए थे, ऐसे स्नेहपात्र ज्ञानी आज्ञाकारी शिष्य की विदाई की बात सुन कर गुरु जी का हृदय भर उठा। भावविभोर होकर चरणों में झुके शिष्य के सिर पर हाथ फेर कर गुरु विरजानन्द जी बोले—"वत्स, मैं आपके लिए मंगलकामना करता हूं। ईश्वर आपकी विद्या को सफल करें, परन्तु, मुझे गुरु-दक्षिणा में लौंगों से भिन्न दूसरी वस्तु चाहिए। वह वस्तु तुम्हारे पास है, दोगे ?"

शिष्य दयानन्द जी ने कहा—"गुरुदेव, यह सेवक तन, मन, सर्वस्व आपको अर्पण किए हुए है। श्री मुख से जो आदेश होगा, उसे आजीवन शिरोधार्य करूंगा। गुरु महाराज आज्ञा कीजिए।"

गुरु विरजानन्द जी बोले—"भारत देश में दीन-हीन जन अनेक विधि दुःख पा रहे हैं। जाओ, उनका उद्धार करो। मत-मतान्तरों के कारण जो कुरीतियां प्रचलित हो गई हैं उनका निवारण करो। आर्य जनता की बिगड़ी दशा सुधारो। आर्य-सन्तान का उपकार करो। ऋषि शैली प्रचलित करके वैदिक ग्रन्थों के पठन-पाठन में लोगों को लगाओ। गंगा-यमुना के निरन्तर गतिशील प्रवाह की भांति लोक-कल्याण करो। प्रिय पुत्र, गुरु दक्षिणा में यही वस्तु दान करो, अन्य किसी सांसारिक पदार्थ की मुझे चाह नहीं है।

शिष्य स्वामी दयानन्द सरस्वती ने गुरुदेव के एक-एक वचन को स्वीकार करते हुए गद्गद कण्ठ से कहा—"श्री महाराज देखेंगे कि उनका प्रिय शिष्य इन आज्ञाओं का प्राणपण से किस प्रकार पालन करता है।" गुरु जी ने शिष्य के सिर पर हाथ रख कर आशीर्वाद दिया—"बहुत अच्छा, दयानन्द जी जाइए, ईश्वर आपको सफलता दे, आपके मनोरथ सफल हों।" पृथक् होते शिष्य से गुरु जी ने अन्तिम बात कही—"दयानन्द, स्मरण रखना, मनुष्यकृत ग्रन्थों में परमात्मा और ऋषि-मुनियों की निन्दा भरी है, परन्तु आर्ष ग्रन्थों में नहीं, आर्ष-अनार्ष ग्रन्थों की यही परख है। यह कसौटी हाथ से कभी न छोड़ना।" —*नरेन्द्र विद्यावाचस्पति*

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वेदप्रकाश

संस्थापक : स्वर्गीय श्री गोविन्दराम हासानन्द

वर्ष ४५, अंक ६ वार्षिक मूल्य : बीस रुपये अप्रैल १९९६

सम्पा॰ अजयकुमार आ॰ सम्पादक : स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती

मानव-चिन्तन में उपनिषदों की भूमिका

–नरेन्द्र विद्यावाचस्पति

भारतीय चिन्तन में ही नहीं, मानव-चिन्तन में उपनिषदों का चिन्तन उल्लेखनीय स्थान रखता है । उपनिषदें भारतीयों और आर्यों के आध्यात्मिक चिन्तन की विश्वसनीय स्रोत हैं । उपनिषद् शब्द शद्लृ धातु से बना है । उसके तीन अर्थ हैं–विशरण=नाश करना, गति करना और शिथिल करना, जिसके द्वारा निश्चयपूर्वक ब्रह्म का सामीप्य प्राप्त किया जा सके, अथवा उस ब्रह्मविद्या की उपलब्धि, जिससे अविद्या का नाश होता है, जिससे आनन्द मिलता है और जन्म-मरण के चक्कर से मुक्ति मिल सकती है ।

भारतीय चिन्तन की कितनी महत्ता है, प्राच्य विद्या विशारद प्राध्यापक मैक्समूलर ने कहा था–"यदि मुझ से पूछा जाए कि अन्तरिक्ष के नीचे कौन-सा वह स्थल है, जहां मानव के मानस ने अपने अन्तराल में निहित ईश्वर प्रदत्त-अन्तरतम सद्भावों को पूर्ण रूप से विकसित किया है, गहराई में उतर कर जीवन की कठिनतम समस्याओं पर विचार किया है, उनमें से अनेक को इस प्रकार सुलझाया है, जिन्हें जानकर प्लेटो और काण्ट का अध्ययन करने वाले मनीषी भी आश्चर्यचकित रह जाएं तो मेरी अंगुलि भारत की ओर उठेगी..... इतना ही नहीं, भाषा, धर्म, पुराण-कथा, तत्त्वज्ञान, न्याय, कानून, नीति-रीति, कला एवं प्राचीन शास्त्र इत्यादि जो भी मानव-मस्तिष्क के विकास क्षेत्र माने

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
जाते हैं, उनमें किसी भी एक विषय का समस्या उपस्थित करने वाले या आगे बढ़ने की इच्छा से या अनिच्छा से तुम्हें भारत की यात्रा करनी ही होगी, क्योंकि मानव-इतिहास की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण, मूल्यवान् और ज्ञानदायक सामग्री का विपुल भण्डार तो भारत में, सिर्फ भारत में और भारत में ही संगृहीत है ।''

उपनिषदें वस्तुतः ब्राह्मणग्रन्थों के कोरे कर्मकाण्ड के विरुद्ध एक नया दृष्टिकोण या चिन्तन प्रस्तुत करती हैं । आधुनिक विचारक भी उपनिषदों को भारत का सर्वश्रेष्ठ दार्शनिक साहित्य स्वीकार करते हैं । मुक्तक उपनिषद् में १०८ उपनिषदों का उल्लेख है । इस समय छपी हुई उपनिषदें भी १०० से अधिक उपलब्ध हैं । उनमें से अनेक के विषयों और रचना का अनुमान उनके नामों से लगाया जा सकता है । जैसे 'सूर्योपनिषद्', 'कृष्णोपनिषद्', 'नारायणोपनिषद्' । इस तरह की अनेक उपनषिदों में ब्रह्म के स्वरूप का विवेचन उद्देश्य न होकर इष्टदेव के गुणों का संकीर्त्तन है । इसी तरह एक उपनिषद् 'अल्लोपनिषद्' भी बना डाली गई । मुख्य प्रामाणिक सर्वसम्मत ११ उपनिषदें कही जाती हैं । इन प्रसिद्ध ११ उपनिषदों में सर्वाधिक ख्यात 'ईशोपनिषद्' यजुर्वेद का अन्तिम ४० वां अध्याय है । इसी प्रकार शतपथ ब्राह्मण का अन्तिम भाग ही बृहदारण्यक उपनिषद् है, इस में अद्भुत वन-संस्कृति का नमूना देखने को मिलता है ।

ये प्रधान उपनिषदें हैं—(१.) ईश, (२.) केन, (३.) कठ, (४.) प्रश्न, (५.) मुण्डक, (६.) माण्डूक्य, (७.) तैत्तिरीय, (८.) ऐतरेय (९.) छान्दोग्य, (१०.) बृहदारण्यक और (११.) श्वेताश्वतर ।

उपनिषदों की भाषा ब्राह्मण ग्रन्थों की भाषा से मिलती-जुलती है, विषय अधिकतर आध्यात्मिक है । संसार के वाङ्मय में उपनिषदों का अद्भुत स्थान है । सभी देशों और धर्मों से सम्बन्ध रखने वाले विद्वान् पक्षपात हीन दृष्टि से इसे तत्त्वज्ञान का अद्भुत ग्रन्थ स्वीकार करते हैं । उपनिषदों में ब्रह्म और आत्मा की बात इतनी अच्छी तरह से समझाई गई है कि सामान्य बुद्धि वाले भी उसका विषय समझ लेते हैं ।

उपनिषदों का सन्देश

उपनिषदों में बतलाया गया है—ईश्वर सर्वव्यापक है और वही सब में है । उसे पाने के लिए मनुष्य को सरल-सात्त्विक जीवन बिताना चाहिए । उसे सत्य का पालन करना चाहिए । किसी से वैर-विरोध नहीं करना चाहिए । गुरुजनों का आदर करना चाहिए । न प्रमाद करना चाहिए और न घमण्ड करना चाहिए । चमकीले पदार्थों या वस्तुओं के आकर्षण में नहीं पड़ना चाहिए । जिससे आत्मा का कल्याण हो,

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai
उसी की ओर ध्यान देना चाहिए। धन से सच्चा सुख नहीं मिल सकता। आत्मज्ञान से ही सच्चा सुख मिलेगा, इस सच्चे सुख की प्राप्ति के लिए इन्द्रियों का नियन्त्रण करना चाहिए। दान देना चाहिए, हमें प्राणी मात्र पर दया करनी चाहिए। उपनिषदों का सन्देश है।

परम ब्रह्म परमात्मा

वह परमात्मा आकाश की तरह व्यापक है, शुद्ध है, उसका कोई शरीर नहीं, वह अक्षत है, स्नायुओं से शून्य है, निर्मल है, पाप से मुक्त है। (**स पर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरꣳ शुद्धमपापविद्धम्।**) सब को देखने वाला है, सब कुछ जानने वाला है, सब से अच्छा है, स्वयम्भू है, अपने आप होने वाला है, उसी ने सभी प्राणियों के लिए यथायोग्य कर्त्तव्यों का वर्गीकरण किया है। ईश उपनिषद् ८। उस ब्रह्म का दर्शन करने से हृदय की गांठ खुल जाती है, सारे सन्देह दूर हो जाते हैं और जीवात्मा के कर्म नष्ट हो जाते हैं। (**भिद्यते हृदयग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्वसंशयाः। क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन्दृष्टे परावरे॥ मुण्डक उपनिषद् २।२।८**) आनन्द ही ब्रह्म है, आनन्द से ही सब जीवों की सृष्टि होती है, आनन्द से ही जीवित रहते हैं और फिर आनन्द में ही समा जाते हैं। (**आनन्दो ब्रह्मेति...आनन्दाद्ध्येव खल्विमानि भूतानि जायन्ते। आनन्देन जातानि जीवन्ति। आनन्दं प्रयन्त्यभि सं विशन्तीति॥ तैत्तिरीय उपनिषद् २।६**) वही एक देव सब प्राणियों के भीतर विराजमान है। वही सब में समाया हुआ है। सभी के कर्मों का वही नियामक है, वही साक्षी है, ज्ञाता है, केवल और निर्गुण है। (**एको देवः सर्वभूतेषु गूढः सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा। कर्माध्यक्षः सर्वभूताधिवासः साक्षी चेता केवलो निर्गुणश्च॥ श्वेताश्वतर उपनिषद् ६।११**)

दुःख से मुक्ति-सच्चे आत्मज्ञान से

दुःख से मुक्ति प्राप्त करने का साधन क्या है? ऋषियों का कथन है, वह आत्मज्ञान है। ज्ञानी लोग कहते हैं '**आत्मानं विद्धि**' आत्मा को जानो। आत्मा को देखो-'**आत्मा वा अरे द्रष्टव्यः।**' (बृहदारण्यक उप० २।४।५) ज्ञानोपलब्धि का फल आत्म सुख है, इसलिए आत्मा का ज्ञान कराना, चाहे वह ब्रह्म से भिन्न हो या-अभिन्न, प्रत्येक दर्शन का लक्ष्य है। वेदों और उपनिषदों में आत्मा और उसके आत्मज्ञान का विशद विवेचन मिलता है। वाजश्रवा के पुत्र उद्दालक ने विश्वजित् यज्ञ किया। यज्ञ के बाद दक्षिणा में उद्दालक ने सारा धन, बूढ़ी और दूध न देने वाली गौएं भी दीं, पुत्र नचिकेता ने

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पूछा–"मुझे किसे देते हैं ?" पिता कुछ न बोले । नचिकेता ने तीन बार अपना प्रश्न दोहराया । क्रुद्ध होकर पिता ने कहा–"तुम्हें यमराज को देता हूं ।" पिता के वचन शिरोधार्य कर नचिकेता यम-आचार्य के यहां पहुंचे । तीन दिन बाद वह लौटे । यम-आचार्य ने कहा–"मुझे क्षमा करो, तुम अतिथि होकर भी मेरे द्वार पर तीन दिन भूखे रहे । तुम्हें तीन वर देता हूं ।" नचिकेता ने पहले वर के माध्यम से पिता का क्रोध शान्त करने के लिए, दूसरे वर से अग्नि विद्या की जानकारी मांगी । दोनों वर मिलने पर नचिकेता ने कहा–"मरने के बाद मनुष्य कहां रहता है, या वह नहीं रहता, इस का रहस्य समझना चाहता हूं।" यम आचार्य ने तरह-तरह के प्रलोभन दिए–पुत्र-पौत्र, धन-सम्पदा, सब तरह के भोग देने के लिए कहा पर नचिकेता ने आत्म-ज्ञान सीखने का आग्रह किया । इस पर यम-आचार्य ने प्रेयशास्त्र और श्रेयशास्त्र–उभय शास्त्रों का विवेचन किया । प्रेयशास्त्र वह है जिस में संसार में सुख देने वाली विद्याओं का दर्शन हो । श्रेयशास्त्र वह है, जिस में इन प्रपंचों को दूर करने वाले मोक्षोपयोगी विषयों का विवेचन हो। नचिकेता ने श्रेय को चुना, फलतः आचार्य ने उसे आत्मज्ञान की शिक्षा दी ।.इसीलिए कठोपनिषद् में कहा गया है–हे मनुष्यो उठो, जागो, सावधान हो जाओ और श्रेष्ठ महापुरुषों के पास जाकर आत्मज्ञान प्राप्त करो । (**उतिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत । कठ० ३।१४**)

उपनिषदों के समय की सामाजिक दशा

उपनिषदों के विवरणों से यह मालूम पड़ता है कि उस काल में ब्रह्मचर्य, गृहस्थ और वानप्रस्थ तीनों आश्रमों का व्यापक चलन था। उस युग में वर्ण-व्यवस्था में जड़ता या कठोरता नहीं थी । ब्राह्मण लोग क्षत्रियों के पास ब्रह्मविद्या सीखने जाते थे । तत्कालीन सम्राट् जनक सर्वसम्मत ब्रह्मवादी माने जाते थे । बड़े-बड़े विचारक और चिन्तक उनके पास ज्ञान प्राप्त करने जाते थे । उस समय के सामाजिक संगठन की एक झांकी सत्यकाम जाबाल की प्रसिद्ध कहानी से मिलती है । जबाला का पुत्र सत्यकाम जब विद्याध्ययन के लिए आचार्य के पास जाने लगा तब उसने अपनी मां से पूछा–"मेरा गोत्र क्या है ? जब आचार्य पूछेंगे कि तुम्हारा क्या गोत्र है तो मैं क्या उत्तर दूंगा?" माता ने उत्तर दिया–"बेटा, मुझे पता नहीं, तेरा क्या गोत्र है । किसी अज्ञात व्यक्ति से तू उत्पन्न हुआ, इस कारण मुझे तेरा गोत्र मालूम नहीं । मेरा नाम जबाला है, तेरा नाम सत्यकाम है, तुम अपना पूरा नाम सत्यकाम जाबाल बता देना ।"

आचार्य हारिद्रुमत के पास ज्ञान-प्राप्ति के लिए जब सत्यकाम

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai
पहुंचा, तब उन्होंने उससे उसका गोत्र पूछा। जो कुछ माता ने बतलाया था, सत्यकाम ने वैसा दुहरा दिया। इस पर प्रसन्न होकर आचार्य ने उसे ब्रह्मज्ञान का उपदेश दिया।

स्त्रियों की स्थिति : उत्तम आदर्श

उपनिषत्काल को स्त्रियों की स्थिति का अनुमान इस घटना से लगाया जा सकता है कि ऋषि-याज्ञवल्क्य की पत्नी मैत्रेयी ब्रह्मवादिनी विशेषण से प्रख्यात थी और विदुषी गार्गी ने विद्वानों की भरी सभा में अपने प्रश्नोत्तरों से अनेक विद्वानों को निरुत्तर कर दिया था। ऋषि याज्ञवल्क्य से जनक की जिस सभा में अनेक ब्रह्मज्ञानियों ने गम्भीर प्रश्न पूछे थे, उन में वाचक्नवी गार्गी नाम की ब्रह्मवादिनी भी थी। ऊंची शिक्षा प्राप्त करने में या पुरुषों की विद्वद् सभाओं में नारियों की पुरुषों से समान स्थिति थी।

उस समय देश की सुख शान्ति का आदर्श छान्दोग्य उपनिषद् में राजा अश्वपति की इस घोषणा से मिलता है—"मेरे देश में न चोर हैं, न कंजूस और न शराबी हैं। ऐसा कोई व्यक्ति भी नहीं है जो होम न करता हो या विद्वान् न हो। मेरे राज्य में कोई दुराचारी भी नहीं, दुराचारिणी कैसे हो सकती है ? (**न मे स्तेनो जनपदे न कदर्यो न मद्यपो। नानाहिताग्निर्ना विद्वान्न स्वैरी स्वैरिणी कुतः॥**)

उपनिषत्काल में विद्याओं और कलाओं की प्राप्ति का अन्दाजा छान्दोग्य उपनिषत् के उद्धरण से लग सकता है।

ऋग्वेदं भगवोऽध्येमि यजुर्वेदं सामवेदमाथर्वणं चतुर्थमितिहास-पुराणं पञ्चमं वेदानां वेदं पित्र्यं राशिं दैवं विधिं वाकोवाक्यमेकायनं देवविद्यां ब्रह्मविद्यां भूतविद्यां क्षत्रविद्यां नक्षत्रविद्यां सर्वदेवजन-विद्यामेतद् भगवोऽध्येमि।

सनत्कुमार ने चारों वेदों के अतिरिक्त इतिहास, पुराण आदि अनेक विद्याएं, प्राणिविद्या, नक्षत्र विद्या, समाज-शास्त्र आदि का अध्ययन किया था। हम उपनिषदों के अध्ययन से उस समय के समाज का एक रेखाचित्र खींच सकते हैं। उपनिषदों की विशेषता यह है कि वह ब्रह्मविद्या को संसार की सब विद्याओं से ऊंचा रखती है। उनके अनुसार अन्य विद्याएं अपरा हैं और ब्रह्मविद्या परा विद्या है। यही मनोवृत्ति है, जिसने युग युगान्तर तक भारतीय संस्कृति को अनुप्राणित किया है।

महाकवि रवीन्द्रनाथ और उपनिषद्

महाकवि रवीन्द्रनाथ कहते हैं—उपनिषद् में कहा है, '**स तपोऽतप्यत स तपस्तप्त्वा सर्वमसृजत् यदिदं किञ्च।**' उसने तप किया

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai
और उसकी सृष्टि तप से की । ईश्वर का तप ही दु:ख रूप से पृथ्वी पर विराजता है । चाहे आन्तरिक जगत् में हो या बाह्य जगत् में । किसी चीज का सृजन हम तप से ही कर सकते हैं । जन्म का आधार वेदना है । त्याग के मार्ग से ही लाभ तक पहुंचा जा सकता है । जो कुछ अमर है, उसे प्रयत्नों की सीढ़ी पर चढ़ कर ही प्राप्त किया जा सकता है । इस तरह हम ईश्वर की तपस्या का वहन करते हैं । उसी तप का दाह नित नये रूप में मानवीय अन्त:करण में प्रकाशित होता है । यह तपस्या आनन्द का ही अंग है । इसीलिए एक पक्ष से उपनिषद् में कहा गया है—**'आनन्दाद्धयेव खल्विमानि भूतानि जायन्ते ।'** आनन्द से ही प्राणी मात्र की उत्पत्ति हुई है । तो पृथ्वी के इतने भारी दु:ख का बोझ कोई सहता कैसे ? **ह्येवान्यात् क: प्राण्यात् यदेष आकाश आनन्दो न स्यात्** । किसान खेती करके फसलें उगाता है । जितनी बड़ी उसकी तपस्या, उतना ही गम्भीर उसका आनन्द होता है । चक्रवर्ती राजा का साम्राज्य निर्माण महान् दु:ख है तो महान् आनन्द भी है । देशभक्त अपनी प्राणाहुति से राष्ट्र को गढ़ता है, इसी में उसका चरम-आनन्द है, ऐसी ही होती है प्रेमी की प्रियतम साधना, ऐसा ही ज्ञानी का ज्ञानार्जन ।

उपनिषदों में कहा गया है कि ब्रह्मज्ञान कोई भी साधक अधिकारी बन कर प्राप्त कर सकता है । मोक्ष आत्मा के स्वरूप की अभिव्यक्ति ही है । यह आत्म-साक्षात्कार अथवा आत्मा का ज्ञान आत्मा की परिशुद्धि द्वारा ही प्राप्त होता है । (बृहदा० उप० ४।५।१९)

मोक्ष भी मानव का प्राप्य धर्म है, उसी की साधना का फल है । मोक्ष को अथवा इस आत्म-तत्त्व को अनिर्वचनीय जीवन से परे की वस्तु समझ कर सीमित कर दिया गया, इसलिए उसका नित्य प्रति के जीवन से सम्बन्ध टूट गया । वास्तव में आत्मतत्त्व की आवश्यकता और प्रेरणा इस लोक के लिए भी है । यह मानव में श्रेष्ठता का उन्नयन करती है । इस ज्ञान की प्राप्ति और आत्म-तत्त्व का विकास मनुष्य के प्रमाद रहित होने पर ही होता है (मुण्डक उपनिषद् २।२।४)

उपनिषद् में कहा गया है—अशुभ को शुभ में बदल देना ही मानव की श्रेष्ठता है । इस से ब्रह्म की उपलब्धि का मार्ग प्रशस्त होता है तथा 'स्व' और 'पर' का कल्याण होता है । कर्मयोगी बनकर संसार की उपेक्षा नहीं कर सकते, क्योंकि संसार उपनिषदों के अनुसार ब्रह्मरूपी है ।

सन्तुलित सामंजस्य अपेक्षित

स्वभावत: जिज्ञासा होती है कि क्या उपनिषदें ब्रह्म, आत्मतत्त्व के साक्षात्कार और इस सांसारिक जीवन से दूर मुक्ति को प्राप्त करने का परामर्श देती हैं, भारतीय वैदिक संस्कृति और उपनिषदें इस संसार

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

को त्याग कर मुक्ति का मार्ग नहीं दिखलातीं, प्रत्युत वे मानव जीवन में समुचित सामंजस्य करने का सत्परामर्श देती हैं । भारतीय संस्कृति के धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष चार आधार स्तम्भ कहे गए हैं । उन्हें **'चतुर्विधाः पुरुषार्थाः'** भी कहा गया है । हमारी संस्कृति की सीख है धर्मपूर्वक अर्थ का सम्पादन करो, इसी प्रकार धर्मपूर्वक काम का सम्पादन करो । धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष ये ही जीवन के लक्ष्य और आधार हैं । धर्म की मर्यादा के अर्थ और काम का मर्यादित प्रयोग करो । अभ्युदय के लिए व्यक्ति ठीक साधनों से अधिकतम कमाए, वह व्यक्ति परिवार, समाज, मानवता के कल्याण और अभ्युदय के लिए सभी तरह की ऊंची से ऊंची कामनाएं करे । परन्तु उस अर्थ और कामनाओं का धर्म की मर्यादा के अनुसार प्रयोग करे । जीवन में सन्तुलन और सामजस्य क्यों अभीष्ट हैं, उसके सन्दर्भ में एक ऐतिहासिक घटना सीख देती है ।

दूधमुंहे पुत्र राहुल, पत्नी और कपिलवस्तु राज्य का मोह छोड़ कर युवराज सिद्धार्थ तपस्या के लिए चल पड़े । उन्होंने योग साधना सीखी, समाधि लगाई, केवल तिल-चावल खाकर कठिन तप शुरू किया, अन्न की मात्रा कम कर दी, जिसका नतीजा हुआ कि शरीर सूख कर कांटा हो गया । कठिन तप करते हुए छह महीने बीत गए, पर सिद्धार्थ की तपस्या फलीभूत नहीं हुई । एक दिन किसी नगर से समवेत स्वरों में गाती हुई कुछ स्त्रियां निकलीं । उनके समवेत मधुर स्वरों का बोल था–

वीणा के तार ढीले न छोड़ो, स्वर सुरीला न निकलेगा ।
वीणा के तार इतने कसो भी नहीं कि वे चरमरा जाएं टूट जाएं ।।

बात सिद्धार्थ को जंची । उन्हें गीत के बोलों ने सीख दी–जीवन के लिए जहां नियमित सन्तुलित आहार-विहार चाहिए, वहां जीवन तभी संवरेगा, जब उसमें कहीं अति न हो । कोई मध्यमार्ग अपनाया जाए । इसी प्रकार उपनिषदों में सीख दी गई है–यह गतिशील संसार जगन्नियन्ता से ओत-प्रोत है, इस शाश्वत सचाई को हृदयंगम कर हम अभ्युदय, निःश्रेयस और सद्गति के मार्ग पर चलें । (**ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत् ।**) यह सब कुछ उस जगन्नियन्ता का दिया हुआ है, अपने परिश्रम या विरासत में मिली सम्पदा या सम्पत्ति तुम्हारी नहीं है, तुम मात्र उसके न्यासी या ट्रस्टी हो, इसलिए उस जगन्नियन्ता की दी हुई सम्पदा का तू त्यागपूर्वक उपभोग कर । (**तेन त्यक्तेन भुञ्जीथाः मा गृधः कस्य स्विद्धनम् ।**) इसी के साथ साधक को सत्परामर्श दिया गया है–इस संसार में कर्मों को करते हुए ही सौ वर्ष जीने की इच्छा करें । **कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतः समाः ।**

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai
उपनिषदों की शिक्षा द्वारा यह सत्परामर्श भी दिया गया है कि केवल सांसारिक भौतिक विद्याओं में पारंगत होकर प्रेयशास्त्र में निष्णात होकर कल्याण नहीं है, प्रत्युत सांसारिक प्रपंचों से दूर मोक्षोपयोगी विषयों-श्रेयशास्त्र में भी गति होनी चाहिए। ईशोपनिषद् में प्रेयशास्त्र को असम्भूति-अविद्या शब्दों से तथा श्रेयशास्त्र को अविनाशशील सम्भूति-ज्ञान स्वरूपी-विद्या शब्दों से कहा गया है। मानव के सच्चे अभ्युदय के लिए उसे भौतिक और आध्यात्मिक मार्गों का अवलम्बन करना चाहिए, उनका सन्तुलित सामंजस्य स्थापित करना चाहिए। **अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययाऽमृतमश्नुते**। तप विद्या से अपूर्णताएं दूर करो विद्या से मुक्ति प्राप्त करो।

सर्वत्र एक ही आत्मा के दर्शन करो

याज्ञवल्क्य ऋषि की दो पत्नियां थीं—मैत्रेयी और कात्यायनी। उसने दोनों पत्नियों से कहा—"मैं अब गृहत्याग कर विरक्त होना चाहता हूं, इसलिए अपनी सारी सम्पदा तुम दोनों में बांटना चाहता हूं।" कात्यायनी सीधी-सादी थी, कुछ न बोली, परन्तु विचारशीला मैत्रेयी बोली—"यदि पृथ्वी की सारी सम्पदा मिल जाए तो उससे मुझे क्या सच्चा सुख या मुक्ति मिल सकेगी?" (**यन्नु म इयं भगोः सर्वा पृथिवी वित्तेन पूर्णा स्यात्कथं तेनामृता स्यामिति। बृहदा० २।४।२**) याज्ञवल्क्य का उत्तर था—"नहीं मैत्रेयी, धन-सम्पदा से सच्चा सुख नहीं मिल सकेगा, धन से तुम विलासी जीवन व्यतीत कर सकती हो, पर मुक्ति नहीं मिलेगी। (**अमृतत्वस्य नाऽऽशास्ति वित्तेन। —बृहदा० २।४।२**)

मैत्रेयी ने कहा—"फिर मैं ऐसी सम्पत्ति का क्या करूंगी, जिस धन से सच्चा सुख नहीं मिल सकता। मुझे तो अमरता की राह बतलाइए।" याज्ञवल्क्य ने मैत्रेयी को सच्चा सुख पाने की राह दिखलाते हुए कहा—"पति हो, पत्नी हो, पुत्र हो, सभी अपने लिए ही प्यार करते हैं। कोई भी प्राणी-मनुष्य धन-सम्पत्ति या पदार्थ को तभी प्यार करता है, जब उनसे उसका लगाव हो, उसके साथ आत्मा का सम्बन्ध है, इसीलिए इस आत्मा को ही देखना चाहिए। (**आत्मा वा अरे द्रष्टव्यः श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्यो मैत्रेय्यात्मनो वा अरे दर्शनेन मत्या विज्ञानेनेदं सर्वं विदितम्। —बृहदा० २।४।५।**) जिस प्रकार शंख बजाने पर शंख की आवाज पकड़ में नहीं आ सकती, पर यदि शंख को या शंख बजाने वाले को पकड़ लिया जाए तो शंख की आवाज पकड़ में आ सकती है। (**स यथा शखस्य ध्मायमानस्य न बाह्याञ्शब्दान् शक्नुयाद् ग्रहणाय शंखस्य तु ग्रहणेन शंखध्मस्य वा शब्दो गृहीतः। —बृहदा० २।४।८**) इसलिए आत्मा

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai
को पकड़ना चाहिए। सब जगह एक ही आत्मा के दर्शन करने चाहिए। जब सब एक आत्मा ही हो गया, तब उसे देखने-सुनने का प्रश्न नहीं। सब ओर आनन्द ही आनन्द होगा। (**यत्र वा अस्य सर्वमात्मैवाभूत्केन कं जिघ्रेत्केन कं पश्येत्। –बृहदा० २।४।१४**)

कभी अहंकार न करें

देवताओं और दानवों में युद्ध हुआ। युद्ध में देवता विजयी हो गए, उन्हें अपनी शक्ति का अहंकार हो गया कि यह विजय उनकी है। (**अस्माकमेवायं विजयोऽस्माकमेवायं महिमेति। केन उप० ३।१**) ब्रह्म को अनुभूति हुई कि ऐसा अहंकार ठीक नहीं वह तेज का स्वरूप धारण कर देवताओं के सम्मुख पहुंचा। देवताओं को जिज्ञासा हुई कि यह तेज कौन है। सब से पहले अग्नि सामने आया। तेज ने अग्नि से पूछा–'तुम कौन हो?' अग्नि ने कहा–'मैं अग्नि हूं, जातवेदस पृथ्वी पर जो कुछ है उसे जला कर भस्म कर सकता हूं। तेज ने सामने एक तिनका रखा और कहा, जरा इसे तो जला। सारी शक्ति लगाकर भी अग्नि उसे नहीं जला सका।

फिर सामने वायु आया। उसने कहा–'मैं वायु हूं। मातरिश्वा–पृथ्वी पर जो कुछ है, उसे उड़ा सकता हूं।' ''जरा इस तिनके को तो उड़ा।'' सम्पूर्ण शक्ति लगाकर वायु उसे उड़ा नहीं सका। हारकर देवता इन्द्र के पास पहुंचे। इन्द्र जब आया तब वहां तेज न था। देवी उमा थी। इन्द्र ने जिज्ञासा की–''देवि, वह कौन था ?'' उमा ने बतलाया–''हे इन्द्र वह तेज रूपी ब्रह्म था। उसी की सत्ता से सारा जगत् बना है। जगत् की सारी क्षमता, सारा उत्कर्ष उसी का है। (**सा ब्रह्मेति हो वाच। ब्रह्मणो वा एतद्विजये महीयध्वमिति। केन उप० ४।१**) तुम लोगों को जो विजय मिली थी, वह तुम्हारी न होकर ब्रह्म की क्षमता से तुम लोगों को मिली थी। ब्रह्म ही सब कुछ करता है, हम सब निमित्त मात्र हैं।

केन उपनिषत् की यह छोटी-सी कहानी मानव को जीवन में अहंकार छोड़ने का सत्परामर्श देती है। बृहदारण्यक उपनिषत् के एक अन्य कथानक से मालूम पड़ता है, मानव-जाति अपने कर्म स्वभाव के कारण ही देवत्व, मानवत्व, और असुरत्व भागों में बंटी हुई है। कथा की बानगी लीजिए–प्रजापति की तीन सन्तानें थीं–देव, मानव और असुर। ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए वे ब्रह्मा के पास विद्याध्ययन कर रहे थे। जब देवताओं का अध्ययन पूरा हुआ तब उन्होंने आचार्य प्रजापति से अनुरोध किया–''हमें दीक्षा दीजिए।'' प्रजापति ने उन्हें दीक्षा 'द' अक्षर की दी। पूछा–''इस 'द' का मतलब समझे।''

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai
देवताओं ने कहा– भगवन्, हम समझे गए, हम इन्द्रियलोलुप हैं, आपकी सीख है इन्द्रियों का नियन्त्रण करो ।''

जब मनुष्यों की शिक्षा पूरी हुई । दीक्षा की प्रार्थना करने पर प्रजापति ने उन्हें भी 'द' अक्षर की दीक्षा दी । पूछा–''इस 'द' का मतलब समझे ।'' मनुष्यों ने कहा–''समझ गए, हम लालची जीव हैं, आपने हमें दान देने का परामर्श दिया है ।'' फिर असुर लोग दीक्षा के लिए गए, प्रजापति ने उन्हें भी 'द' अक्षर की दीक्षा दी और पूछा– ''इस 'द' का मतलब समझे ।'' असुरों ने कहा–''हम क्रूर लोग हैं, आपने हमें दया करने की सलाह दी है ।''

वस्तुतः मानव जाति में देव, मनुष्य और असुर सब हैं । प्रजापति ने इन्द्रियों के दमन करने, लोभ न करने, दान देने और कठोरता न कर दया वृत्ति अपनाकर मानव मात्र को–दमन करो, दान दो, दया करो का मूल मन्त्र दिया है ।

मानव का सच्चा दीक्षान्त

वैसे तो उपनिषदों में जीवन को अभ्युदय और निःश्रेयस के मार्ग पर ले चलने के लिए असंख्य मार्ग-दर्शक नीतिवचन मिल जायेंगे परन्तु सच्चे अभ्युदय और निःश्रेयस के लिए उन कुछ आदर्श-सूत्रों पर ध्यान दिया जा सकता है जो उपनिषत्-काल के आचार्य जीवन-संग्राम में पदार्पण कर रहे अपने शिष्यों को अपने दीक्षान्त सन्देश में देते थे। तैत्तिरीय उपनिषद् का आचार्य अपने अन्तेवासियों को दो प्रकार के उपदेश और आदेश देता था–''सत्य बोलो, धर्म का पालन करो, स्वाध्याय में कभी प्रमाद न करो । (**सत्यं वद, धर्मं चर, स्वध्यायान्मा प्रमदः । –तैत्तिरीय उप० १।११**) इसी प्रकार तुम्हें सत्य का पालन करने, धर्म का पालन करने, आत्मरक्षा के लिए उपयोगी कर्म, मंगलमय कर्मों देवताओं और पितरों के कार्यों में कभी प्रमाद न करना चाहिए । (**सत्यान्न प्रमदितव्यम्, कुशलान्न प्रमदितव्यम्, भूत्यै न प्रमदितव्यम्, स्वाध्यायप्रवचनाभ्यां न प्रमदितव्यम्, देव-पितृकार्याभ्यां न प्रमदितव्यम् । तैत्तिरीय उप० १।११**)

आचार्य शिष्यों को दीक्षान्त के अवसर जीवन में समुन्नति के लिए कुछ मार्ग-दर्शक नीति-सूत्रों को अपनाने का आदेश देते थे–''माता को पूजनीय समझकर उनकी सेवा करो, पिता की सेवा करो, आचार्य का आदेश मानो, अतिथि का सदा मान करो ।'' (**मातृदेवो भव, पितृदेवो भव, आचार्यदेवो भव, अतिथिदेवो भव । –तैत्तिरीय उप० १।११**) जीवन में यदि अपने कार्यों या आचार के विषय में कोई सन्देह या शंका हो तो विचारशील कर्मों में संलग्न,

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai
कर्त्तव्यपरायण, धर्मपरायण विद्वानों ने जैसा आचरण किया है, वैसा आचरण करना । इसी प्रकार हमारे जो भी सुचरित हों केवल उनका ही तुम्हें अनुकरण करना चाहिए ।'' (**अथ यदि ते कर्मविचिकित्सा वा वृत्तविचिकित्सा वा स्यात्, ये तत्र ब्राह्मणाः सम्मर्शिन युक्ताः अयुक्ताः अलूक्षा धर्मकामाः स्युः यथा ते तत्र वर्त्तेरन् तथा तत्र वर्तेथाः एष आदेशः ।** –तैत्तिरीय उप० १।११)

मानवीय या भारतीय चिन्तन में उपनिषदों की बड़ी भूमिका है । ये उपनिषदें मानवीय ज्ञान की पहली धरोहर वेदों के सार कहे जाते हैं । इन ग्रन्थों में आत्मज्ञान के साथ ब्रह्म और आत्मा के आध्यात्मिक चिन्तन के रहस्य की चर्चा के साथ ईश्वर, ब्रह्म, आत्मा से साक्षात्कार के मार्ग को दिखलाया गया है । साथ ही मानव को सत्य बोलने, किसी से वैमनस्य न रख कर गुरुजनों के आदर का सत्परामर्श दिया गया । वहां सलाह दी गई है, चमकीली वस्तुओं के आकर्षण में न पड़कर आत्मा के कल्याण के साधनों पर ध्यान देना चाहिए । धन से सच्चा सुख नहीं मिलेगा, सच्चे सुख के लिए आत्मज्ञान करें, इन्द्रियों का नियन्त्रण करें, दान दें, प्राणी मात्र पर दया करें । जीवन में भगवान् हमारी रक्षा करें, हम मिलकर कार्य करें, हमारा शक्ति-सामर्थ्य बढ़े । हम सब प्राणियों के कल्याण के लिए प्रयत्नशील हों ।

आइए, ग्यारह उपनिषदों के माध्यम से मानवीय भारतीय चिन्तन की एक झांकी लें । *–अभ्युदय, बी-२२ गुलमोहर पार्क, नई दिल्ली-११००४९*

एक अनूठा प्रकाशन

ऋषि बोध-कथा

श्री स्वामी जगदीश्वरानन्द जी से कई बार स्वामी वेदानन्द जी तीर्थ के बारे में चर्चा छिड़ जाती है । हम दोनों उनकी चर्चा आरम्भ कर देते हैं तो फिर यह चर्चा बहुत देर तक चलती है । ऐसा क्यों? इसका उत्तर एक संक्षिप्त घटना से देता हूं ।

एक बार बड़े यत्न से मैंने स्वामी वेदानन्द जी का लेख खोजा। वह लेख पूज्य स्वामी सर्वानन्द जी महाराज को दिखाते हुए कहा कि यह लेख इतिहास विषयक है और किसी भी विश्वविद्यालय का इतिहास का कोई विरला प्राध्यापक ही इस विषय का इतना ज्ञान रखता होगा। मैंने कहा– स्वामी जी ! स्वामी वेदानन्द जी का इतिहास का इतना विस्तृत व गम्भीर ज्ञान देखकर बड़ा अचम्भा होता है । स्वामी जी बोले, ''स्वामी वेदानन्द जी को क्या नहीं आता था ? वे तो अनेक विषयों के अधिकारी विद्वान् थे । आज ऐसे विद्वान् हैं कहां ?''

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जब स्वामी वेदानन्द जी विषयक मेरी व स्वामी जगदीश्वरानन्द जी की चर्चा चलती है तो उनके द्वारा लिखित ऋषि बोध-कथा पुस्तक की उपयोगिता पर हम दोनों ही कुछ न कुछ कहते हैं । इस प्रसंग में स्वामी जी अपना एक संस्मरण अवश्य सुनाया करते हैं कि स्वामी वेदानन्द जी पांच भागों में ऋषि जीवन लिखना चाहते थे । पूज्य स्वामी वेदानन्द जी महाराज के इस (Project) योजना का मुझे भी ज्ञान है। हम दोनों को उस महान् विद्वान् के स्नेह व समीपता की प्राप्ति का सौभाग्य प्राप्त रहा है ।

अनेक बार चर्चा होने पर भी श्री स्वामी जी ने मुझे यह नहीं बताया कि ऋषि-बोध-कथा पुनः छप चुकी है । सम्भवतः वह यह समझते रहे हैं कि मुझे इसके नये संस्करण का पता है, परन्तु मुझे तो इसके पुनर्जन्म का पता २ मार्च को ही लगा । इसका दोष किसे दूं ? मैं स्वयं को ही दोषी मानता हूं ।

यह पुस्तक महर्षि दयानन्द का जीवन-चरित तो नहीं है, परन्तु ऋषि-जीवन पर प्रकाश डालने वाली एक अनूठी पुस्तक है । हिन्दी में ऐसी दूसरी पुस्तक अभी तक तो छपी नहीं । न ही किसी अन्य भाषा में ऐसी अद्‌भुत पुस्तक मिलेगी । हाँ, स्वर्गीय मास्टर धर्ममित्र जी लिखित ऋषि-जीवन भी अपने ढंग की एक उत्तम कृति है । श्री स्वामी वेदानन्द जी ने इस पुस्तक की भूमिका में ही अपना यह मत दिया है कि पुनः पुनः व विविध प्रकार से ऋषि-जीवन पर पुस्तकों का प्रकाशन होते रहना चाहिये ।

इस पुस्तक पर मैं इतना मुग्ध क्यों हूं ? यह एक ऐसी पुस्तक है जो आबाल, वृद्ध सब के लिए उपयोगी है । यह एक ऐसी पुस्तक है जो विद्वान्, अविद्वान् व अल्पशिक्षित सब के लिए पठनीय है । इसमें सन् संवत् का बोझा पाठकों को अधिक नहीं ढोना पड़ता । ऋषि-जीवन की छोटी, बड़ी, प्रेरक, रोचक व जीवन को स्फूर्ति देने वाली अनेक घटनाएं इसमें दी गई हैं ।

अन्य जीवन-चरित्रों में दी गई घटनाएं तो लेखक ने दी ही हैं । इसमें ऋषि-जीवन की ऐसी भी कई घटनाएं दी हैं जिनका ज्ञान आज हमारे बड़े-बड़े शोध-कर्त्ताओं को भी नहीं । कारण हमारे बी०ए०, एम०ए०, पी-एच० डी० उपाधिधारी बहुत से भारतीय विद्वान् ट्रिब्यून, इण्डियन ऐक्सप्रेस आदि पत्रों व विदेशी लेखकों के उद्धरण देने में अपनी बड़ाई समझते हैं । हीनभावना से ग्रसित ऐसे देशवासी या तो अपनी ही सामग्री चुरा लेंगे या फिर उपेक्षा करेंगे । लाभ उठायेंगे तो कृतज्ञता का प्रकाश नहीं करेंगे ।

स्वामी वेदानन्द जी, स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी साधुओं के साथ

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai
बड़ा विचरण किया करते थे अत: महर्षि के सम्पर्क में आए लोगों के श्रीमुख से सुनी कई घटनाएं आपने दी हैं । यथा पृष्ठ ५१ पर महर्षि के ब्रह्मचर्य विषयक राजा जयकिशनदास से हुई अपनी बातचीत स्वामी जी ने दी है ।

पृष्ठ ४९ पर अवधूत मथुरादास जी का अखण्ड ब्रह्मचारी दयानन्द विषयक कथन दिया है । पृष्ठ ७८ पर मुल्तान निवासी प्रसिद्ध विद्वान् गोस्वामी घनश्याम जी का एक संस्मरण दिया है ।

पृष्ठ ४९ का तीसरा पैरा पढ़िये । ऋषि के निर्मल-जीवन पर ऐसी सूक्ष्म परन्तु तथ्य पूर्ण बात वेदानन्द सरीखा परम ज्ञानी व खोजी ही लिख सकता है ।

इस पुस्तक की विशेषता यह है कि इस पुस्तक में ऋषि जीवन के साथ साथ वैदिक धर्म की मुख्य-मुख्य शिक्षाओं व ऋषि के उपकारों का बहुत ठोस परिचय करवाया गया है ।

'देश की परिस्थिति' प्रथम अध्याय में इतिहास विषयक इतना ठोस ज्ञान करवाया गया है जो अन्यत्र किसी ग्रन्थ में इतने पृष्ठों में नहीं मिलेगा । मैं बड़ा भाग्यशाली हूं कि मैंने इस पुस्तक के प्रकाशन से पांच वर्ष पूर्व पूज्य स्वामी जी के श्रीमुख से यह कथा लेखराम नगर (कादियाँ) में सुनी थी । तब मैं दसवीं कक्षा का विद्यार्थी था । बड़े दुर्भाग्य की बात है कि आर्य विद्वानों ने आर्य जनता को इस उत्तम पुस्तक का परिचय नहीं करवाया । प्रकाशक बधाई के पात्र हैं जिन्होंने स्वामी जगदीश्वरानन्द जी की प्रेरणा से इसका दूसरा संस्करण निकाला है । मूल्य केवल दस रुपये है । पुस्तक सजिल्द है । कागज व छपाई सब बढ़िया है । स्वामी जगदीश्वरानन्द जी ने प्रमाणों के अते-पते देकर इसे और उपयोगी बना दिया है । प्रत्येक पृष्ठ पर अर्थ सहित एक सूक्ति वेद-पाठ के लिए है ।

यदि प्रकाशक इसका टाईप कुछ स्थूल कर देते तो अधिक लाभ होता । मैं ऋषि भक्तों से सानुरोध कहूंगा कि इस उत्तम पुस्तक की ५०-५० और १००-१०० प्रतियां लेकर भेंट करें, पढ़ें व पढ़ावें । पुण्य कमायें । इसका अगला संस्करण मैं तैयार करूंगा । इस के लिए मेरे मस्तिष्क में एक योजना है । इसका सम्पादन मैं ऐसा करूंगा कि थोड़ी रुचि रखने वाला पाठक भी इसे क्रय करने व पढ़ने के लिए उत्सुक होगा । विजयकुमार गोविन्दराम हासानन्द फर्म के संचालक श्री अजय से मेरा आग्रह है कि इस उत्तम पुस्तक के प्रसार के लिए विशेष उद्योग करें । वे जन बड़े भाग्यशाली होंगे जो इस पुस्तक को पढ़ेंगे ।

-प्राध्यापक राजेन्द्र जिज्ञासु
वेद सदन अबोहर-१५११११६

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ओ३म्

ईश्वर-उपासना क्यों ?

उपासना का अर्थ—उपासना का अर्थ है समीपस्थ होना अर्थात् समीप बैठना या समीप पहुँचना। अतः ईश्वर के समीप बैठना, ईश्वर के सर्वव्यापी, सर्वान्तर्यामी, रूप का ध्यान करना व उसमें लीन हो जाना ही ईश्वर की उपासना है।

ईश्वर के निराकार स्वरूप एवं एकमात्र उसी की उपासना वैदिक उपदेश के बाद अब हमें यह विचार करना है कि हम ईश्वर की उपासना क्यों करें ?

अधिकांश नर-नारी इस संसार में आकर अपने आप (आत्मा) को और उसके स्वामी परमात्मा को भूल जाते हैं। कुछ मनुष्य यह प्रश्न पूछते हैं कि ईश्वर की उपासना करने की क्या आवश्यकता है ? इस प्रकार के प्रश्नों के उत्तर यहाँ तर्क एवं प्रमाणसहित प्रस्तुत हैं—

१. आत्मा को भोजन देने के लिए

हमारे इस शरीर में मुख्यतः चार वस्तुएँ विद्यमान हैं—१. यह वाह्य दिखायी देनेवाला स्थूल शरीर, २. मन, ३. बुद्धि, और ४. आत्मा। संसार में प्रत्येक क्रियाशील वस्तु को किसी-न-किसी प्रकार के भोजन की आवश्यकता होती है—हमारे शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा भी क्रियाशील हैं, इसलिए इन्हें भी भोजन अनिवार्य है। इनका भोजन इस प्रकार है—

(अ) सर्वप्रथम स्थान पर — यह हाड़-मांस का **स्थूल शरीर** है। इस शरीर की रक्षा के लिए अन्न, फल-दूध, भोजन तथा वस्त्र, आदि की अनिवार्य आवश्यकता है। ये सभी पदार्थ अर्थ कहाते हैं। इनके अभाव में यह शरीर चलना असम्भव है। अतः स्थूल शरीर के लिए अर्थ अनिवार्य है।

(आ) दूसरे स्थान पर है— **मन**। '**सङ्कल्प विकल्पात्मकं मनः**', अर्थात् सङ्कल्प और विकल्प करनेवाला ही मन है। हमारा मन सदैव कुछ-न-कुछ कामना (इच्छा) करता रहता है। जीवन में अनेक वस्तुओं की आवश्यकता रहती है तथा सुख-दुःख

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

भी आते रहते हैं। अनेक सुखों को प्राप्त करने की कामनाएँ ही काम कहाती हैं। हमारा मन सदैव इस 'काम' में व्यस्त रहता है। यदि मन में कोई कामना न हो तो मन स्थिर, शान्त व निष्क्रिय हो जाएगा। यह काम के सहारे से ही कार्य करता है। अतः मन का भोजन हुआ —काम ।

(इ) तीसरे स्थान पर है—बुद्धि । हमारी बुद्धि का कार्य अच्छे-बुरे का निर्णय करना है। हम क्या करें, क्या न करें? यह निर्णय केवल बुद्धि ही कर सकती है, मन या इन्द्रियाँ नहीं। सत्-असत् का विवेक ही धर्म कहाता है। जिस मनुष्य में सत्-असत् का निर्णय करने की शक्ति नहीं होती, उसे हम बुद्धिहीन कहते हैं। दूसरे शब्दों में उसे अधार्मिक भी कहा जाएगा। बुद्धिमान उसी को कहा जाता है, जिसे धर्म-अधर्म (सत्-असत्)का ज्ञान होता है। जिसे धर्म का ज्ञान है, उसे अधर्म का स्वतः ही ज्ञान हो जाता है। इस प्रकार बुद्धि का भोजन हुआ—धर्म ।

(ई) चौथे स्थान पर है—आत्मा । अब यह विचारना है कि आत्मा का भोजन क्या है? यह शरीर तो अन्न, फल, जल आदि एक-से-एक श्रेष्ठ पौष्टिक पदार्थ खाकर स्वस्थ रहता है; मन अनेक कामनाओं की पूर्ति करके प्रसन्न रहता है; और बुद्धि सत्यासत्य का निर्णयकर सत्य को स्वीकारकर प्रसन्न रहती है। आत्मा क्या खा-पीकर प्रसन्न रहता है? आत्मा का भोजन है—ईश्वर की उपासना। जब मनुष्य निर्मल तन-मन एवं बुद्धि से ईश्वर की उपासना करता है तो आत्मा प्रसन्न होता है। पर आत्मा के इस भोजन को आत्मा तक आने या पहुँचने से पूर्व ही मन और बुद्धि नष्ट-भ्रष्ट कर देते हैं,क्योंकि यह मन बड़ा चञ्चल होता है। वह कभी तो धन-ऐश्वर्य की प्राप्ति में सुख मानता है, कभी सन्तान-प्राप्ति में, कभी भोग-वासना में, कभी यश-प्राप्ति में, कभी पद एवं अधिकार-प्राप्ति में, कभी दूसरों को सुख देने में, और कभी दूसरों को दुःख देने में सुख मानता है। यह मन, बुद्धि को भी फुसलाकर अपनी सहयोगिनी बना लेता है, जिससे बुद्धि भी इन कार्यों को सफल करवाने में जुट जाती है। जब मनुष्य २४ घण्टे इन कार्यों में ही सुख खोजता रहता है तो ईश्वर-उपासना में उसका मन नहीं लगता, और उपासना के अभाव में आत्मा भूखा रह जाता है।

जब मनुष्य सांसारिक सुख-ऐश्वर्य की प्राप्ति में ही सुख मानता है; या मन को प्रसन्न करने में ही उसका सेवक बनकर उसकी सेवा में लगा रहता है, तो उसकी बुद्धि सांसारिक वस्तुओं से भिन्न किसी अन्य सत्ता-व्यवस्था को भी मानने से मना करने लगती है। वह मनुष्य यह भूल जाता है कि ये समस्त सांसारिक पदार्थ

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai
नश्वर है। इनसे प्राप्त सुख भी नश्वर है। इसके विपरीत ईश्वर अनश्वर है तथा उसका साथ (अर्थात् उसकी उपासना) ही सच्चा आनन्द देनेवाला है।

भौतिक पदार्थों के मोह में फँसकर मनुष्य सांसारिक पदार्थों तथा व्यक्तियों की ही उपासना करने लगता है, क्योंकि वह सद्बुद्धि से यह कभी नहीं विचारता कि मुझे किसकी उपासना करनी चाहिये?

जिस प्रकार मात्र सांसारिक सुख-भोग अन्ततः नश्वर एवं कष्टदायी हैं, उसी प्रकार सांसारिक वस्तुओं या व्यक्तियों की उपासना भी नश्वर तथा घोर दुःखदायिनी है, क्योंकि जो सच्चिदानन्द, निराकार, अनादि परमेश्वर के स्थान पर अन्य किसी की उपासना करता है, वह घोर दुःख पाता है। अतः हमें सदैव प्रातःसांय परमपिता-परमात्मा की उपासना अवश्य करनी चाहिये। इससे ही हमारा आत्मा तृप्त व स्वस्थ हो सकेगा तथा मोक्ष को प्राप्त कर सकेगा।

यहाँ पहले की भाँति कुछ मनुष्यों के मन में यह प्रश्न उत्पन्न हो सकता है कि क्या सांसारिक वस्तुओ तथा कार्यों को सर्वथा त्याग दिया जाएँ? इसका उत्तर इस प्रकार है— इस जीवन में आकर हमें धर्म (परोपकार तथा ईश्वर की उपासना); अर्थ (जीवन के लिए आवश्यक सांसारिक पदार्थों की प्राप्ति); काम (श्रेष्ठ कामनाओं की सन्तुष्टि); और मोक्ष (दुःखों, दुर्गुणों, दुष्कर्मों, दुर्जनों तथा जन्म-मरण के बन्धन से छूटकर परमात्मा की प्राप्ति) को प्राप्त करना है।

इस प्रकार हमें इस संसार में प्रत्येक कार्य करते समय यह ध्यान रखना चाहिये कि वह कार्य धर्म (लोककल्याण) के अनुकूल हो, अर्थात् पवित्र हो, वह हमें संसार में लिप्त करनेवाला न होकर, ईश्वर की ओर ले जानेवाला हो।

इस प्रकार जब आत्मा को उसका भोजन (ईश्वरोपासना) प्राप्त होगा तो आत्मा की भूख मिटेगी, वह स्वस्थ और प्रसन्न रहेगा तथा ईश्वर प्राप्ति के मार्ग में आनेवाले शत्रुओं अर्थात् काम (काम-वासनाएँ) क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य को पराजित करता हुआ मन के मल, विक्षेप तथा आवरण को दूर करके परमात्मा के पास पहुँचकर परमानन्द में लीन हो जाएगा।

जिस प्रकार हम अपने शरीर को भी भोजन देते हैं, उसी प्रकार आत्मा की भूख-प्यास मिटाने के लिए हमें उसे उसका भोजन ईश्वर-उपासना नित्य देना चाहिये।

ईश्वर उपासक जब सच्चे मन से ईश्वर उपासना करता है, तो एक अवस्था ऐसी आ जाती है, कि उसे शारीरिक भोजन की इतनी आवश्यकता नहीं रहती,

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitized by eGangotri Funding by AryaSamaj Foundation Chennai
जिसको आत्मिक भोजन (उपासना) की रहती है। कई बार अजीर्ण होने पर शरीर को स्वस्थ रखने के लिए भोजन का त्याग करना आवश्यक हो जाता है, किन्तु ईश्वर-उपासना रूपी भोजन से कभी अजीर्ण होता ही नहीं। अतः आत्मा के भोजन ईश्वर-उपासना को त्यागना उचित नहीं है।

२. सत्यासत्य का निर्णय करने के लिए

यह संसार अनेक गुण-दोषों से भरा हुआ है। दुर्गुण बड़े लुभावने रूप धारणकर मानव को अपनी ओर आकृष्ट करते हैं तथा अपने बन्धन में इस प्रकार जकड़ लेते हैं कि मनुष्य का छूटना कठिन हो जाता है, जिससे उसकी बुद्धि भी दुर्गुणमय हो जाती है और वह सत्य-असत्य का निर्णय करने-योग्य नहीं रहती। वह असत्य (दुर्गुणमय) वस्तु, कर्म एवं व्यक्ति को ही सत्य (सद्गुणमय) मानने लगती है। परन्तु जब मनुष्य इन्द्रियों और मन को शान्तकर ईशोपासना करता है तो मन एवं बुद्धि दोनों निर्मल हो जाते हैं। दिव्य परमपिता परमात्मा का ध्यान करने पर उसकी दिव्यता के प्रभाव से उपासक या ध्यान करनेवाले के मन-बुद्धि दोनों सद्गुणयुक्त (निर्मल) हो जाते हैं, तो वह सत्य-असत्य का निर्णय करने की शक्ति प्राप्त कर लेता है। साधारण मनुष्य प्रातःकाल से सायंकाल तक और सायंकाल से प्रातःकाल तक जो भी कर्म करता है, उनमें लीन रहते समय वह प्रायःयह निर्णय नहीं कर पाता कि मेरे कर्मों में दोष क्या है? परन्तु जब वह प्रातः-सायं ईश्वरोपासना करता है तो धीरे-धीरे उसे यह शक्ति प्राप्त हो जाती है कि वह अपने किये गए अथवा आगे होनेवाले कर्मों में व्याप्त गुण-दोष (सत्य-असत्य) को पहचान लेता है। वह यह चिन्तन करने लगता है कि मुझे क्या करना चाहिये और क्या नहीं करना चाहिये? दूसरे शब्दों में वह कर्त्तव्य-अकर्त्तव्य का निर्णय करने में समर्थ हो जाता है।

३. मन की शुद्धि के लिए

इस गुण-दोषयुक्त संसार में रहनेवाले हम मनुष्य जाने-अनजाने में नित्य अनेक त्रुटियाँ करते रहते हैं, जिनसे हमारे मन में भी अनेक दोष उत्पन्न होते रहते हैं,कभी स्वार्थ के वशीभूत होकर, कभी अज्ञान के वशीभूत होकर, और कभी विवशतावश हम अनेक अनुचित कर्म करते हैं। इसके साथ ही यह भी ध्यान देने योग्य है कि हम जिस संसार में रहते हैं, उसमें दुर्गुणी मनुष्य अधिक हैं, श्रेष्ठ कम। जब हम नित्य-प्रति दुर्गुणी लोगों के बीच रहते हैं, तो उनके दुष्कर्मों से थोड़ा-बहुत

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai
प्रभाव हमारे मन पर भी पड़ता है। यह प्रभाव ही हमारे मन में दुर्गुणों की संख्या बढ़ाता है। यथा—

प्रत्येक परिवार में नित्य प्रातः-सायं जिन पात्रों में भोजन किया जाता है। भोजन के बाद उन पात्रों में अशुद्धि रह जाती है। घर में पात्रों को माँजकर उस जूठन-अशुद्धि को दूरकर दिया जाता है और जूठे किये गए, पात्र स्वच्छ एवं निर्मल होकर पुनः भोजन-योग्य बना दिए जाते हैं। यदि जूठे पात्रों को न माँजा जाए तो उन अशुद्ध पात्रों में कोई भी बुद्धिमान व्यक्ति भोजन नहीं करेगा। यदि करेगा तो रोगी हो जाएगा।

ठीक इसी प्रकार नित्य अनेक योजनाएँ बनाने, विचार करने और कर्म करने के फलस्वरूप मानव के मन-रूपी पात्र में अनेक दुर्गुणों की अशुद्धि जम जाती है। इसे दूर करनाअनिवार्य है, अन्यथा इससे मन-बुद्धि दोनों रोगी (दुर्गुणी) हो जाएँगे और मनुष्य दुष्कर्मी हो जाएगा ।

मन-रूपी पात्र की अशुद्धि को दूर करने का एकमात्र उपाय प्रातः-सायं ईश्वर की उपासना है। ईश्वर-उपासना करने से मनुष्य के मन में व्याप्त समस्त दुर्गुण छूटकर नष्ट हो जाते हैं, और मन-बुद्धि दोनों निर्मल होने के कारण मनुष्य पवित्र कर्म करने लगता है। इसके पश्चात् नित्य प्रति ईश्वर- उपासना करने से दुर्गुण उसके पास फटकने का साहस नहीं करते।

जब हमारा मन शुद्ध हो जाता है, हमारी बुद्धि पवित्र और स्थिर हो जाती है, तो हम कर्म भी पवित्र करते हैं। इससे हम अपने जीवन के उद्देश्य को प्राप्त करने में सफलता प्राप्त कर लेते हैं। अतः मन की शुद्धि के लिए भी ईश्वर की उपासना करना अनिवार्य है।

४. ईश्वर की दयालुता का धन्यवाद देने के लिए

यद्यपि इस भीषण संसार में हमें पग-पग पर कष्ट उठाने पड़ते हैं, तथापि परमात्मा की कृपा से वे कष्ट समाप्त होते जाते हैं। वास्तव में परमपिता परमात्मा बड़े ही दयालु हैं।

यदि हमारे समक्ष कोई समस्या खड़ी होती है तो हम उसे हटाने के लिए इधर-उधर दौड़ते फिरते हैं, अनेक अच्छे-बुरे मनुष्यों की चाटुकारिता करते हैं और अनेक के चरण तक पकड़कर प्रार्थना करते हैं। यह स्थिति तो समस्या समाप्त होने से पूर्व की होती है। अब यदि कोई व्यक्ति हमारी सहायता करके हमारी समस्या

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai
समाप्त कर या करवा देता है तो हम हाथ जोड़कर उसे अनेक वार धन्यवाद देते हैं, उसके घर मिष्टान्न, फल, आदि तक देकर आते हैं। परन्तु प्रत्येक समस्या का समाधान तो ईश्वर की कृपा से ही होता है। वे ही अदृश्य रूप से मनुष्यों के मन में सहायता का भाव जगाते हैं और हमें सफलता तक पहुँचाते हैं। पर आश्चर्य तो इस बात का है कि हम सफलता दिलवानेवाली वास्तविक शक्ति (ईश्वर) का एक बार भी धन्यवाद नहीं देते। बस सर्वत्र प्रत्यक्ष में सहायता करनेवाले नर या नारी की ही प्रशंसा करते रहते हैं, जबकि हमें सच्चे सहायक ईश्वर को ही सबसे अधिक वार धन्यवाद देना चाहिये।

अब प्रश्न उत्पन्न होता है कि ईश्वर को धन्यवाद कैसे दें? इसका सीधा-सा उत्तर यह है कि हम नित्य प्रति ईश्वर की उपासना करें।

यहाँ भी एक उदाहरण प्रस्तुत है—

एक मनुष्य के हाथ की अँगुली कट गई तो उसके सम्बन्धी उसे तत्काल चिकित्सक के पास ले गये। चिकित्सक ने उस उँगली को जोड़कर ओषधि लगाकर पट्टी बाँध दी और अपना शुल्क तथा ओषधि-मूल्य ले लिये। कुछ दिनों बाद घायल व्यक्ति की अँगुली ठीक हो गई, तो उसने चिकित्सक को अनेक बार धन्यवाद दियाऔर उस चिकित्सक की प्रशंसा सर्वत्र करने लगा।

यहाँ आप ध्यान से विचारिये कि आहत व्यक्ति ने अँगुली के चिकित्सक को उसके चिकित्सा-कार्य का मूल्य दिया, फिर भी उसका गुणगान करता है। पर ईश्वर ने तो हमें यह सुन्दर अद्‌भुत शरीर निःशुल्क दिया है; हमे देखने, बोलने तथा अन्य समस्त कर्म करने-योग्य बनाया है। हम केवल एक अङ्ग के चिकित्सक को तो उसका मूल्य और धन्यवाद दोनों देते हैं। पर इस सम्पूर्ण अद्‌भुत शरीर को बनानेवाले को मूल्य तो हम दे ही नहीं सकते, धन्यवाद तक भी नहीं देते। यह हमारी कृतघ्नता नहीं तो और क्या है? जैसा शरीर परमात्मा ने दिया है, वैसा संसार के समस्त वैज्ञानिक मिलकर भी नहीं दे सकते। इस शरीरको चलाने के लिए परमात्मा ने शरीर में मन, बुद्धि, प्राण और आत्मा को समा रखा है। इतना कुछ करने पर भी हम उसका धन्यवाद नहीं देते।

हमारा शरीर इतना अद्‌भुत है कि इसका वर्णन शब्दों में पूरी तरह करना असम्भव है। आँख, नाक, कान, जिह्वा और त्वचा, इन्द्रियाँ, अपने कार्य बड़े ही निपुणता से कर रही हैं; मस्तिष्क सब पर नियन्त्रण रखे हुए है; उदर सबका भोजन अपने पास इकट्ठाकर सबको न्यायोचित ढंङ्ग से वितरित कर रहा है; हम रात्रि

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
आदि में विश्वास होकर तो जाते हैं, पर सृष्टि की नियमबद्धता, सुव्यवस्थित ढङ्ग से अपना कार्य करता रहता है। यह सब अद्भुत कार्य किसी मानव-निर्मित यन्त्रादि से नहीं, वरन् ईश्वर की कृपा-शक्ति से हो रहा है। जब ईश्वर सोते-जागते हमारा पूरा-पूरा ध्यान रखते हैं तो क्या हमारा इतना भी कर्त्तव्य शेष नहीं रहा कि हम प्रातः-सायं तो उसका स्मरण (उपासना) ही कर लेवें। उस सर्वशक्तिमान, सर्वनियन्ता परमात्मा ने हमारे जीवन को सुचारु रूप से चलाने के लिए—वायु, जल, अन्न, फल, फूल, शाक-भाजी, आदि अनेक पदार्थ उत्पन्न किये हैं। हमें तो परमात्मा का उसकी दयालुता के लिए हर साँस में स्मरण करना चाहिये, उसका धन्यवाद देना चाहिए, तथा नित्य प्रातः-सायं उसकी उपासना करनी चाहिये। ईश्वर का स्मरण, चिन्तन और उपासना ही ईश्वर की कृपा का धन्यवाद है।

५. सद्बुद्धि के लिए

हम जितने भी कार्य करते हैं उन सभी को करने के लिए बुद्धि की आवश्यकता है। यदि मनुष्यकी बुद्धि ठीक है तो कार्य भी ठीक होगा। इसके विपरीत यदि बुद्धि ठीक नही है तो कार्य भी ठीक नहीं हो सकता। अतः कार्य की सफलता हमारी बुद्धि पर निर्भर करती है। जिस मनुष्य की बुद्धि स्थिर है वह अच्छे-बुरे का सोच-विचारकर कार्य करता है, पर जिसकी बुद्धि स्थिर नहीं अर्थात् विचलित रहती है उसके सभी कार्य अधूरे रहते हैं। ऐसा व्यक्ति कभी कुछ कहता है, तो कभी कुछ; कभी कुछ निश्चय करता है; तो कभी कुछ, और कभी कुछ कार्य आरम्भ करता है; तो कभी कुछ। इस प्रकार एक उचित या श्रेष्ठ कार्य को करने के लिए यह आवश्यक है कि मनुष्य की बुद्धि स्थिर हो तथा उसका मन शान्त हो।

परन्तु स्थिर बुद्धि उसी व्यक्ति की हो सकती हैं, जिसके मन में सात्विक (पवित्र) विचार हों। सात्विक विचारवाले व्यक्ति की बुद्धि भी सात्विक ही होती है। जब मनुष्य ही बुद्धि शुद्ध-सात्विक हो जाती है, अर्थात् उसे सद्बुद्धि प्राप्त हो जाती है,तो वह प्रत्येक कार्य करने से पहले सत्-असत् (पवित्र-अपवित्र) का विचार करके पवित्र कार्य ही कराता है। जब तक मनुष्य में सद्-बुद्धि रहती है, तब तक वह श्रेष्ठ कर्म ही करता है, परन्तु जब स्वार्थ,वासना, क्रोध, मोह, लोभ, ईर्ष्या, द्वेष,आदि के असत् विचारों के कारण उसकी सद्बुद्धि नष्ट होकर मनुष्य में दुर्बुद्धि आ जाती है, तब वह बुरे कर्म करने लगता है।

संसार के समस्त सुखों-का मूल सद्बुद्धि है। सद्बुद्धिवाला मनुष्य सत्कर्म

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation Chennai
करता है, सत्कर्म करने से उनके मन-बुद्धि शान्त हो जाते हैं, उसकी तृष्णाएँ घट जाती हैं, वह किसी से ईर्ष्या-द्वेष नहीं करता वह किसी पर अकारण क्रोध नहीं करता; किसी के धन-ऐश्वर्य, आदि को देखकर उसके मन में लोभ का भाव नहीं आता। वह किसी की बहू-बेटी को बुरी दृष्टि से नहीं देखता। वह अपार, धन, ऊँचे से ऊँचा पद व मान पाकर भी घमण्ड नहीं करता। प्रदर्शन का भाव उसके मन से भाग जाता है और वह सीधा-सादा जीवन व्यतीत करता है। वह सदैव (सबके सामने भी और एकान्त में भी) आत्मोन्नति, परोपकार और ईश्वर-भक्ति की बातें करता व सोचता है। वह श्रेष्ठ साहित्य का संग्रह करता है, और उसका जी भर स्वाध्याय करता है। समाज के श्रेष्ठ नर-नारी उसका सर्वत्र सम्मान करते हैं और उसका यश सर्वत्र फैल जाता है। ऐसे मनुष्य को जीवन में सभी सुख मिलते हैं। वह अपार शान्ति का अनुभव करता है और उसका जीवन सफल हो जाता है।

इसके विपरीत संसार के समस्त दुःखों का मूल दुर्बुद्धि है। दुर्बुद्धि युक्त मनुष्य सदैव दुष्कर्म करता है। उससे उसका मन-बुद्धि अशान्त हो जाते हैं। उसकी तृष्णाएँ (इच्छाएँ) निरन्तर बढ़ती जाती हैं। वह दूसरों से ईर्ष्या-द्वेष करता है। किसी पर भी अकारण क्रोध कर बैठता है। वह सदैव धन-ही-धन की बातें करता रहता है। लोभ उसे बुरी तरह घेर लेता है। स्वार्थ के विना वह किसी से बात करता। वह परनारियों को सदैव वासना की दृष्टि से ही देखता है। छोटा-सा पद या थोड़ा-सा धन-धान्य पाकर ही वह फूला नहीं समाता। वह अपने सामने किसी की कुछ नहीं समझता। वह अपने बनावटी वेश, व बनावटी बातचीत, आदि के द्वारा स्वयं को बहुत बड़ा और बहुत बुद्धिमान प्रदर्शित किया करता है। वह सदैव अपनी बड़ाई करता रहता है। ईश्वर-भक्ति, परोपकार और श्रेष्ठ कर्म, आदि की बातों में उसका मन नहीं लगता, बल्कि ऐसी बातें करनेवालों का वह उपहास किया करता है। वह सदैव श्रेष्ठ पुरुषों का अपमान करने व उन्हें कष्ट पहुँचाने की योजना बनाता रहता है। वह अश्लील या अन्य घटिया साहित्य पढ़कर अपना धन, समय और बुद्धि नष्ट करता है। समाज के श्रेष्ठ नर-नारी उसका कभी सम्मान नहीं करते। श्रेष्ठ समाज में वह सर्वत्र अपमानित होता है, जिससे समाज में सर्वत्र उसका अपयश फैल जाताहै। वह कभी भी सच्चा सुख व शान्ति नहीं पाता, बल्कि घोर दुःख के सागर में डूब जाता है, तथा अगले जन्म में घोर नीच योनियों को प्राप्त करता है।

इस प्रकार सुबुद्धि के कारण तो मनुष्य देवता बन सकता है और दुर्बुद्धि के कारण वह दानव बन जाता है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

प्रत्येक मनुष्य में दानवत्व एवं देवत्व दोनों ही विद्यमान हैं यह तो हमारे ऊपर है कि हम उनमें से किसे छाँटते हैं। हम देवता बनना चाहें तो देवता (पवित्र मनुष्य) बन सकते हैं, और दानव बनाना चाहें तो दानव (दुराचारी मनुष्य) बन सकते हैं।

सदाचारी, सज्जन, पवित्र मनुष्य या देवता बनने के लिए ही परमात्मा ने हमें यह मानव-जीवन दिया है। इसके लिए हमें सद्बुद्धि चाहिये। यह सद्बुद्धि परमपिता परमात्मा की असीम कृपा से प्राप्त होती है और परमात्मा हमें सद्बुद्धि तब देते हैं, जब हम उनसे इसे माँगते हैं और माँगने का सर्वोत्तम ढंग केवल ईश्वर की उपासना है। ईश्वर की उपासना या भक्ति में हमारे ऋषियों ने ईश्वर से सद्बुद्धि माँगने के लिए कहा है। गायत्री महामन्त्र के अन्त में यही प्रार्थना की गई है— "धियो यो नः प्रचोदयात्।" अर्थात् हे ईश्वर! हमें सद्बुद्धि दीजिए, जिससे हम सद्मार्ग पर चल सकें।

६. आत्मरक्षा के लिए

इस संसार में हमारे चारों ओर हमारे अनेक शत्रु रहते हैं। इनमें मनुष्य हैं, अन्य जीव-जन्तु तथा दैवी विपत्तियाँ हैं। सज्जनों के भी शत्रु होते हैं। दुर्जन सदैव उन्हें हानि या कष्ट पहुँचानेकी योजना में ही लगे रहते हैं। सर्प, बिच्छु सिंह, भेड़िया, भालू, आदि अनेक हिसंक जन्तु भी मनुष्य पर आक्रमण करके उसका जीवन ले-लेते हैं। यात्रा आदि में अनेक दुर्घटनाएँ होती रहती हैं। इसके अतिरिक्त भूकम्प, बाढ़, बिजली, प्राकृतिक (दैवी) विपत्तियाँ भी मनुष्यों को कष्ट देती रहती हैं। इन सबके कारण ही हमारा जीवन सर्वत्र कष्ट एवं असुरक्षा से भरा रहता है। हमारे चारों ओर दैहिक, दैविक और भौतिक कष्ट छाए हुए हैं। हम सुखपूर्वक जीना चाहते हैं, पर सुखपूर्वक तो तभी जी सकते हैं, जब इन कष्टों और शत्रुओं से रक्षा होवे। इन सबसे एक साथ रक्षा करने की सामर्थ्य केवल सबके रक्षक एवं सर्वशाक्तिमान परमेश्वर के हाथ में ही है। उपासना में हम ईश्वर से, इन सभी शत्रुओं एवं विपत्तियों से अपनी रक्षा की प्रार्थना करते हैं। जब हम परमपिता के हाथों में सच्चे अर्थो में स्वयं को सौंप देते हैं, तो वे सदैव और सर्वत्र हमारी रक्षा करते हैं। वैदिक सन्ध्या में पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर, नीचे और ऊपर (इन छहों दिशाओं) की ओर से, सब प्रकार की रक्षा की प्रार्थना की जाती है। इस प्रकार अपने जीवन की रक्षा के लिए भी हमें परमेश्वर की उपासना करनी चाहिये।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

७. आत्मानन्द के लिए

मानवात्मा संसार में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति के लिए आया हुआ है। अर्थ और काम की पूर्ति धर्मपूर्वक करनी चाहिये, धर्म से अलग हटकर नहीं। मानव-जीवन का अन्तिम उद्देश्य है—मोक्ष, अर्थात् आत्म-साक्षात्कार करके परमपिता परमात्मा के समीप जा पहुँचना। संसार में रहते हुए हम इसे आत्मानन्द भी कहते हैं। अपने-आप (आत्मा) को जानना, उसे पहचानना तथा परमात्मा की ओर चलना ही आत्मानन्द है। जब हम ईश्वर के ध्यान में लीन होते हैं, तो एक अवर्णनीय आनन्द में खो जाते हैं। उस आनन्द की समानता संसार के किसी भी भौतिक सुख से नहीं की जा सकती, क्योंकि सभी भौतिक वस्तुएँ एवं व्यक्ति नाशवान हैं, इसलिए उनसे प्राप्त सुख भी नाशवान ही हैं, पर आत्मा में मन-बुद्धि के लीन होने तथा आत्म-दर्शन से उत्पन्न आनन्द नाशवान नहीं है, क्योंकि आत्मा कभी नाशवान नहीं है।

सभी जीव अपने-अपने जीवन में अपने शरीर से सच्चा सुख पाने की लालसा में लगे हुए हैं, परन्तु मनुष्य-देह के अतिरिक्त अन्य देहधारी जीव केवल इन्द्रियों का क्षणिक सुख ही भोग पाते हैं। आत्म-चिन्तन करने, बुद्धिपूर्वक विचारकरने, अपने स्वरूप को जानने-पहचानने, शिक्षा ग्रहण करने, आदि की सामर्थ्य उनमें नहीं होती। वे जीव-जन्तु अपने मन का सुख-दुःख अनुभव करके भी कह नहीं पाते। इसीलिए वे आत्मानन्द प्राप्त करने में भी असमर्थ रहते हैं।

परन्तु मनुष्य पर परमात्मा ने विशेष कृपा की है। परमेश्वर ने शिक्षा ग्रहण करने, पढ़ने-लिखने, योग-साधना करने, ज्ञान-प्राप्त करने-कराने, अपनी बात दूसरों को समझाने, तथा दूसरों की बात समझने, और आत्म-चिन्तन करने की सामर्थ्य दी है। मानव का शरीर ही इन सब कार्यों को करने में समर्थ है, अन्य किसी जीवधारी का नहीं। यदि ऐसी सुन्दर मानव-देह पाकर भी हम अपने आत्मा को नहीं जान-पहचान पाते, तो हम पशु-पक्षियों से भी गिरे हुए हैं, क्योंकि पशु-पक्षियों के पास तो ये सब कार्य करने की सामर्थ्य नहीं हैं, परन्तु हमारे पास तो इन सब कार्यों को सफलतापूर्वक करने-योग्य शरीर होने पर भी हम ये श्रेष्ठ कार्य नहीं करते। यह दुःख की बात है। यहाँ वेद के ये मन्त्र दर्शनीय हैं—

(अ) ओ३म् उत स्वया तन्वा संवदे, तत्कदान्वन्तर्वरुणे भुवानि।
किं मे हव्यमहृणानो जुषेत कदा मृळीकं सुमना अभिख्यम् ।।

—[ऋग्वेद, मण्डल ७, सूक्त ८६, मन्त्र २]

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अर्थ—हाँ ! मैं अपने शरीर से संवाद करता हूँ (या पूछता हूँ) कि मैं वरने-योग्य एवं वरनेवाले परमात्मा वरुणदेव के अन्दर कब विराजमान हुआ देखूँ ? वह मेरी किस भेंट को स्वागत करता हुआ स्वीकार करें? कब मैं सुखस्वरूप, आनन्दस्वरूप परमात्मा को पवित्र मनवाला, निरुद्ध मनवाला होकर देख सकूँ ?

अर्थात् हे ज्योतिस्वरूप परमात्मा ! आप कृपा करके मुझे ऐसी शक्ति प्रदान करें कि आप से बिछुड़ा हुआ मैं आपके समीप होकर आप से आलाप करूँ। हे सर्वशक्तिमान्, सर्वनियन्ता सर्वसुखप्रदाता भगवन् ! आप मेरी उपसना-रूपी भेंट को अवश्य स्वीकार करें, और मुझपर ऐसी कृपा करें कि मैं आपको अपने पवित्र मन द्वारा ज्ञानगोचर करूँ। मैं केवल आपकी ही उपासना में निरन्तर रत रहूँ और मेरे सम्मुख एक मात्र आप ही मेरे लक्ष्य हों। अर्थात् मैं ऐसे साधनों को सम्पादित करूँ, जिनसे आनन्दस्वरूप आप में निमग्न होकर मैं भी आनन्द का अनुभव करूँ।

(आ) पृच्छे तदेनो वरुण दिदृक्षूपो एमि चिकितुषो विपृच्छम्।
सथानमिन्मे कवयश्चिदाहुरयं ह तुभ्यं वरुणो हणीते।।

—[वही, मन्त्र ३]

अर्थ—हे सर्वरक्षक परमात्मा ! मैं आपके दर्शन का अभिलाषी हूँ। मेरी यही इच्छा है कि मैं समस्त बन्धनों से मुक्त होकर एक आपको ही प्राप्त करूँ। विद्वान् लोग भी आपके विषय में निश्चयपूर्वक यही बताते हैं कि यह प्रसिद्ध है कि सर्वशक्तिमान् परमात्मा अपने उपासकों को निश्चय करके पापों से उभारकर सुख की ओर ले जाता है।

अर्थात् हे सर्वव्यापक परमेश्वर ! मैं जिन पापों के कारण आपके दर्शन-मिलन से वञ्चित हूँ, मैं उन पापों से छूटकर एक साथ आपको ही प्राप्त होऊँ — आप मुझ पर ऐसी कृपा कीजिए। वेदों के ज्ञाता विद्वानों से पूछने पर, वे यही बताते हैं कि परमात्मा सब प्राणियों का कल्याण चाहते हैं। यदि उपासक अंशमात्र भी परमेश्वर की ओर झुके तो वह दयालु परमात्मा अपने उस उपासक का निश्चय ही उद्धार करते हैं। इसलिए हमें साधन सम्पन्न होकर परमात्मा की उपासना में प्रवत्त होना चाहिए, तभी हम सच्चे आत्मानन्द को प्राप्त कर सकते हैं और तभी हमारा उद्धार हो सकता है। इसके अतिरिक्त दूसरा कोई उपाय नहीं है।

(इ) किमाग आस वरुण ज्येष्ठं यत्स्तोतारं जिघांससि सखायम्।
प्र तन्मे वोचो दूळभ स्वधावोऽवं त्वानेना नमसा तुर इयाम्।।

—[वही, मन्त्र ४]

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अर्थ— हे मगलमय परमात्मन् ! वे बड़े-बड़े पाप क्या हैं जिनके कारण मनुष्य आपको प्राप्त नहीं कर पाते, अथवा प्राप्त करना नहीं चाहते। आप कृपा करके विशेष रूप से उन पापों का मेरे प्रति कथन करें। हे सर्वोपरि अजेय परमात्मन् ! आप सर्वऐश्वर्य सम्पन्न हैं, इसलिए ऐसे पापों से मेरी रक्षा करें, जिससे मैं नम्रता-पूर्वक शीघ्र ही आपको प्राप्त होऊँ।

अर्थात् मैं पापों को त्यागे विना उपासना में सफल नहीं हो सकता, क्योंकि पाप कर्म ईश्वर-उपासना में विघ्नकारी हैं। इसलिए, हे मित्ररूप परमेश्वर ! आप मेरा हनन न करते हुए अपनी कृपा द्वारा मुझे पापों से मुक्त कर दें, जिससे मैं शीघ्र ही आपको प्राप्त कर सकूँ।

यहाँ यह प्रश्न है कि ईश्वर को क्या वस्तु भेंट में दी जाए? हमारे पास सर्वोत्तम वस्तु है—हमारा मन। पर हमारे मन में तो संसार भर के दोष भरे पड़े हैं। क्या ऐसे दोषपूर्ण मन को परमात्मदेव स्वीकार करेंगे? नहीं। तब क्या करें? देखो! हमें इस मैले मन को नित्य प्रातः-सायं बैठकर 'ओ३म्' के जप एवं ध्यान से उपासना करके माँज-धोकर पवित्र करना है तथा शरीर से पवित्र कर्म करने हैं। तभी यह स्थायी रूप से पवित्र रह सकेगा। इसके बाद पूर्ण पवित्र मन को, हम अपने आराध्यदेव परमपिता परमात्मा की भेंट देंगे, और वे परनदयालु परमात्मा इस निर्मल मन की भेंट को स्वीकार करेंगे।

परमात्मा मन रूपी भेंट को तभी स्वीकार करेंगे जब हमारा मन सम्पूर्ण पापों से रहित हो जाएगा। यदि हमारे मन में पापमय विचार विद्यमान हैं, और हम उपासना करते हैं, तो वे पाप हमारी उपासना को निष्फल कर देंगे, क्योंकि अशुद्ध पात्र में शुद्ध वस्तु को रखने पर, वह शुद्ध वस्तु भी अशुद्ध हो जाती है। इसी प्रकार पाप से भरे मन द्वारा ईश्वर-उपासना करने पर हमारी उपासना व्यर्थ हो जाती है।

मानव को छोड़कर अन्य सभी योनियों के जीव-जन्तुओं में घोर अज्ञान या अन्धकार का साम्राज्य है। वे चाहकर भी उस अज्ञान-रूपी अन्धकार को चीरकर या समाप्तकर ज्ञान-रूपी प्रकाश में नहीं आ सकते। यदि हम (मानव) भी जीवन भर स्वार्थ-सिद्धि, एवं काम-वासनाओं की सन्तुष्टि में ही लगे रहते हैं तो हमें अगले जन्मों में लाखों नीच पशु-पक्षियों या अन्य जीव-जन्तुओं की योनियों में जाना पड़ेगा।

इनसे बचने का एक ही उपाय है कि हम (मानव) अपने जीवन के उद्देश्य को जानें, अर्थात् परोपकार करते हुए आत्मज्ञान प्राप्त करके आत्मानन्द की प्राप्ति

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

करें। जो मनुष्य ऐसी सुन्दर एवं बुद्धि के अनुरूप साधना से जवा लगायी हुई मनोखी देह पाकर भी आत्मानन्द प्राप्त नहीं कर पाता, वास्तव में वह बड़ा अभागा है। जो मनुष्य परोपकार-करता हुआ आत्मानन्द को प्राप्त करता है और परमात्मा की प्राप्ति के लिए जीवन भर लगा रहता है, वह वास्तव में बड़ा ही भाग्यशाली है।

इस असाधारण आत्मानन्द को प्राप्त करने का सर्वोत्तम साधन है—ईश्वर की उपासना। उपासना करते समय हमारा मन, इन्द्रियाँ और बुद्धि शान्त होते हैं। वे सब आत्म-चिन्तन एवं आत्म-दर्शन में लीन रहते हैं। आत्मदर्शन-प्राप्ति में पूर्णतः लीन हो जाने पर ही आत्मानन्द मिलता है। आत्मानन्द प्राप्त करने तथा उसे स्थायी रूप में सदैव पाने के लिए पवित्र कर्म (परोपकार) करते रहना भी अनिवार्य है। क्योंकि जब तक हम नीच कर्मों में लगे रहते हैं या केवल स्वार्थ-सिद्धि करते रहते हैं तब तक, आत्म-चिन्तन नहीं हो सकता तथा ईश्वर की सच्ची उपासना नहीं हो सकती। यदि हम नीच कर्म करते हैं, तो चाहे प्रातः-सायं घण्टों पूजा करें, लाखों मन्त्रों का जप करें, अनेक धार्मिक पुस्तकें पढ़ें, नित्य साधु-महात्माओं के प्रवचन सुनें, और कितनी भी तीर्थयात्राएँ करें, ये सब व्यर्थ हैं। ये हमारे पाखण्डमात्र बनकर रह जाएँगे, उससे अधिक कुछ नहीं। इस प्रकार हमें ईश्वर-उपासना इसलिए भी करनी चाहिये कि उपासना से हमें आत्मानन्द या मोक्ष की प्राप्ति होती है।

८. दुःख-निवृत्ति व सुख-प्राप्ति के लिए

मानव-जीवन में पग-पग पर अनेक सङ्कट या दुःख आते रहते हैं, जिनसे कभी-कभी मानव निराश हो जाता है। उसे आगे के जीवन में कोई भी सुख की किरण दिखायी नहीं देती, परन्तु सम्पूर्ण संसार का पालन एवं रक्षा करनेवाला परमेश्वर बहुत शक्तिशाली है। वह हमारे समस्त कष्टों को एक पल में समाप्त करने की शक्ति रखता है। ईश्वर की उपासना करते समय अनेक मन्त्रों में ईश्वर से यह प्रार्थना की जाती है, कि हे परमपिता परमात्मा! आप हमारे समस्त कष्टों को दूर कीजिये तथा हमें समस्त सुख प्रदान कीजिये। सङ्कट में पड़ा मनुष्य **जब बालक की भाँति छोटा एवं निर्मल हृदयवाला होकर सच्चे मन से परमात्मा से अपने कष्ट-निवारण के लिए प्रार्थना करता है,** तो ईश्वर उसकी प्रार्थना अवश्य सुनते हैं, उसे अवश्य स्वीकार करते हैं, और अपने उपासक या भक्त के कष्टों को दूर करके उसे सुख प्रदान करते हैं।

कुछ लोग यह कहते हैं कि ईश्वर से कभी कुछ नहीं माँगना चाहिये। ईश्वर की

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai
भक्ति या उपासना निष्काम भाव से करनी चाहिये।

यह बात संसार से विरक्त, उच्चकोटि के तपस्वियों के लिए तो लागू हो सकती है, पर साधारण मनुष्यों में इतना धैर्य एवं शक्ति नहीं होते, कि वे कष्ट में भी ईश्वर से कुछ न कहें। जब परमेश्वर सर्वशक्तिमान है, सब दुःखों को नष्ट करनेवाला है, सबकी माता है, सबका पिता है और सबका रक्षक है—तब दीन-हीन और दुःखों से घिरे साधारण मनुष्य अपने पिता-माता, सब कुछ से अपने लिए कुछ भी क्यों न माँगे ? यदि हमें किसी वस्तु की प्राप्ति या कार्य की सफलता की इच्छा है, हमारे कर्म पवित्र हैं और हम उसे पाने के अधिकारी हैं, तो हमें उसकी प्राप्ति या सफलता में आनेवाले कष्टों को दूर करने तथा सफलता पाने के लिए ईश्वर से प्रार्थना अवश्य करनी चाहिये।

वेदों में अपने तथा दूसरों के कल्याण के लिए अनेक स्थानों पर परमात्मा से प्रार्थना की गई है। एक स्थल द्रष्टव्य है —

स नः पवस्व शं गवे शं जनाय शमर्वते ।
शं राजन्नोषधीभ्यः ।।

—[**सामवेद**, मन्त्र ६५३]

अर्थ—हे परमेश्वर ! आप हमारे गौ आदि पशुओं के लिए सुख की वर्षा करो। हमारे सन्तानों के लिए सुख की वर्षा करो। हमारे प्राण के लिए सुख की वर्षा करो। हमारी ओषधियों के लिए भी सुख की वर्षा करो।

अर्थात् हे सुखस्वरूप परमेश्वर ! आप हमारे पशु, पुत्र-पौत्रादि, जीवन, ओषधियों, आदि सभी को सुखी कीजिए।

यदि हम वास्तव में उस वस्तु, पद, स्थान, आदि को पाने या कार्य-सिद्धि के अधिकारी हैं, हमारी भावना पवित्र हैं, हम किसी भी निर्दोष को उस कार्य से कष्ट नहीं पहुँचाना चाहते, तो हमें ईश्वर पर पूरा विश्वास करके उसकी प्राप्ति के लिए सच्चे मन से प्रार्थना अवश्य करनी चाहिये। इससे हमें उस कार्य में सफलता अवश्य मिलेगी।

यहाँ यह ध्यान रखना चाहिये कि यदि कोई मनुष्य ईश्वर के गुण दिन भर गाता रहे, पर अपने कार्यों में पवित्रता नहीं लाता या अपना चरित्र नहीं सुधारता तो उसका यह स्तुति-प्रार्थना करना व्यर्थ जाता है। इसी प्रकार यदि कोई मनुष्य कार्य

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai
करना छोड़कर घर में बैठ जाए और ईश्वर-स्तुति ही गाता रहे तो भी सफलता मिलनी कठिन है, क्योंकि वेद में मनुष्य को उपदेश दिया गया है—

कर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छत समाः।।

—[यजुर्वेद, अध्याय ४०, मन्त्र २]

अर्थ— मनुष्य सौ वर्ष पर्यन्त अर्थात् जब तक जीवे तब तक कर्म करता हुआ जीने की इच्छा करे आलसी कभी न होए।

"देखो, सृष्टि के बीच में जितने भी प्राणी हैं अथवा अप्राणी, वे सब अपने-अपने कर्म और यत्न करते ही रहते हैं, जैसे पिपीलिका (चींटी) आदि सदा प्रयत्न करते, पृथिवी आदि सदा घूमते और वृक्ष आदि सदा बढ़ते-घटते रहते हैं, वैसे यह दृष्टान्त मनुष्यों को भी ग्रहण करने-योग्य है। जैसे पुरुषार्थ करते हुए पुरुष का सहाय दूसरा भी करता, वैसे धर्म से पुरुषार्थी पुरुष का सहाय ईश्वर भी करता है। जैसे काम करनेवाले पुरुष को भृत्य कहते हैं और अन्य आलसी को नहीं। देखने की इच्छा करनेवाले और नेत्रवाले को दिखलाते हैं, अन्धे को नहीं।

इसी प्रकार परमेश्वर भी सबके उपकार करने की प्रार्थना में सहायक होता है, हानिकारक कर्म में नहीं। "गुड़ मीठा है" जो कोई ऐसा कहता है, उसको गुड़ प्राप्त वा उसको स्वाद प्राप्त नहीं होता और जो यत्न करता है उसको शीघ्र वा विलम्ब से गुड़ मिल ही जाता है।"

—[**महर्षि दयानन्द सरस्वती**, सत्यार्थप्रकाश, सप्तमसमुल्लास]

मनुष्य को ऐसी प्रार्थना कभी नहीं करनी चाहिये कि हे परमेश्वर! आप मेरे शत्रु का नाश कर दीजिए, वह और उसके पुत्र मर जाएँ, और मेरे पुत्र उत्पन्न हो जाएँ, उसका धन नष्ट हो जाए और वह सारा धन मुझे मिल जाए, उसका सर्वत्र अपमान हो जाए और मेरा सम्मान बढ़ जाए, परमेश्वर ऐसी मुर्खतापूर्ण प्रार्थना या इच्छा पूरी नहीं करता। वह तो न्यायकारी है, सबकी सुनता है, सबके अच्छे-बुरे कर्म देखता है और न्यायानुसार ही फल देता है। अतः हमें सदैव पवित्र एवं उचित दिशा में कर्म करते हुए ही अपनी न्यायोचित इच्छा की पूर्ति के लिए ही परमेश्वर से प्रार्थना करनी चाहिये।

ईश्वर से क्या माँगें ?

ईश्वर की उपासना क्यों करें? इस प्रश्न का उत्तर लिखने के बाद अब इस प्रश्न का उत्तर लिखना भी आवश्यक है कि हम ईश्वर से क्या माँगें?

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai
यहाँ कुछ ऐसे वेद-मन्त्र प्रस्तुत कर रहा हूँ, जिनमें इस प्रश्न का उत्तर है—

(१) भूर्भुवः स्वः । तत्सवितुर्वरेण्यम् ।
भर्गो देवस्य धीमहि । धियो यो नः प्रचोदयात् ।।
—[यजुर्वेद, अध्याय ३६, मन्त्र ३]

अर्थ—हे प्राणस्वरूप परमात्मा ! आप सब दुःख दूर करनेवाले, सब सुख देनेवाले और समस्त संसार को उत्पन्न करनेवाले हैं। अतः आप हमारे सभी दुःख दूर करके हमें सब सुख दीजिये। केवल आप ही ग्रहण करने या उपासना (भक्ति या पूजा) करने-योग्य हैं, अन्य कोई नहीं। हम आपके पूजनीय, पापनाशक, शुद्धस्वरूप तेज का ध्यान करते हैं। आप हमारी बुद्धियों को सदैव सत्कर्मों में लगाइये।

(२) विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव ।
यद भद्रं तन्न आ सुव ।। —[यजुर्वेद, अध्याय ३०, मन्त्र ३]

अर्थ—हे सम्पूर्ण संसार को उत्पन्न करनेवाले, समग्र ऐश्वर्ययुक्त, शुद्धस्वरूप, सब सुखों के दाता परमेश्वर ! आप कृपा करके हमारे सब प्रकार के दुःखों, दुर्गुणों व दुर्व्यसनों को हम से दूर कीजिये, तथा जो कल्याणकारी गुण, कर्म, स्वभाव और वस्तुएँ हैं, वे सब हमें दीजिये ।

(३) यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते ।
तया मामद्य मेधयाऽग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा ।।
—[यजुर्वेद, अध्याय ३२, मन्त्र १४]

अर्थ—हे अग्ने (अर्थात् प्रकाशस्वरूप परमेश्वर) ! आपकी कृपा से जिस बुद्धि की उपासना विद्वान, ज्ञानी और योगी लोग किया करते हैं, उसी बुद्धि से युक्त हमें भी इसी वर्तमान समय में बुद्धिमान बनाइये ।।

(४) तेजोऽसि तेजो मयि धेहि, वीर्यमसि वीर्यं मयि धेहि
बलमसि बलं मयि धेहि, ओजोऽस्योजो मयि धेहि
मन्युरसि मन्युं मयि धेहि, सहोऽसि सहो मयि धेहि ।।
—[यजुर्वेद, अध्याय १९, मन्त्र ९]

अर्थ—हे परमेश्वर ! आप प्रकाशस्वरूप हैं, इसलिए कृपाकर मुझमें भी प्रकाश की स्थापना कीजिये। आप अत्यन्त पराक्रमयुक्त हैं, इसलिए कृपाकर मुझमें भी पूर्ण पराक्रम भरिये। आप अनन्त बलयुक्त हैं, इसलिए मुझमें भी बल धारण

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai
कराइये। आप अनन्त सामर्थ्ययुक्त हैं, मुझको भी पूर्ण सामर्थ्य दीजिये। आप दुष्टों पर क्रोधकारी हैं, मुझे भी वैसा ही कीजिये। आप निन्दा और स्तुति को सहन करनेवाले हैं, कृपाकर मुझे भी वैसा ही कीजिये। हे ईश्वर! मैं आपकी भक्ति का अनुष्ठान करूँ तथा आपके अनुग्रह से संसार में सदैव सुखी रहूँ।

(५) अग्निना रयिमश्नवत् पोषमेव दिवेदिवे ।
यशसं वीरववत्तमम् ।। —[ऋग्वेद, मण्डल १, सूक्त १, मन्त्र ३]

अर्थ—हे ईश्वर! आपकी कृपा से स्तुति करनेवाला मनुष्य उस विद्या, धन-धान्यादि को अवश्य प्राप्त करता है, जो धन प्रतिदिन महापुष्टि करने और सत्कीर्ति को बढ़ानेवाला तथा जिससे विद्या, शौर्य, धैर्य, चातुर्य, बल, पराक्रम और दृढ़ाङ्ग, धर्मात्मा, न्याययुक्त, अत्यन्त वीर पुरुष प्राप्त होते हैं, वैसे धन-धान्य, राज्य एवं ज्ञान-विज्ञान को मैं भी प्राप्त होऊँ तथा आपकी कृपा से धर्मात्मा होकर सदैव सुखी रहूँ।

(६) पाहि नो अग्ने रक्षसः पाहि धूर्तेरराव्णः।
पाहि रीषत उत वा जिघांसतो बृहद्भानो यविष्ठ्य।।
—[ऋग्वेद, (आर्याभिविनय, पृष्ठ २४]

अर्थ—हे सब शत्रुओंको नष्ट करनेवाले परमेश्वर! आप राक्षस, हिंसाशील दुष्ट स्वभाववाले देहधारियों से हमारी रक्षा कीजिये। कृपण और धूर्त्त मनुष्य से हमारी रक्षा कीजिये। जो हमें मारने लगे तथा जो मारने की इच्छा करता है, हे महातेज बलवत्तम! आप उन सबसे हमारी रक्षा कीजिये।

(७) तन्नइन्द्रो वरुणो मित्रो अग्निराय ओषधीर्वनिनोजुषन्त ।
शर्मन्त्स्याम मरुतामुपस्थे यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।।
—[ऋग्वेद, (आर्याभिविनय, पृ० ४५)]

अर्थ—हे भगवन! सूर्य, चन्द्रमा, वायु, अग्नि, जल, ओषधि, वृक्षादि सब पदार्थ, आपकी आज्ञा से सुखरूप होकर हमारा सेवन करें। हे रक्षक! प्राणादि पवनों की गोद में बैठे हुए हम आपकी कृपा से सदा सुखी रहें, सब-प्रकार के लक्षणें से आप हमारी रक्षा करो, हमें किसी प्रकार की हानि न हो ।

(८) मा नस्तोके तनये मा न आयौ,मा नो गोषु मा नो अश्वेषु रीरिषः।
वीरान्मा नो रुद्र भामितो वधीर्हविष्मन्तः सदमित्त्वा हवामहे ।।
—[ऋग्वेद, (आर्याभिविनय, पृष्ठ ७६)]

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अर्थ—हे रुद्र दुष्टविनाशकेश्वर ! आप हम पर कृपा करो। हमारे ज्ञानवृद्ध, वयोवृद्ध पिता को आप नष्ट मत करो, तथा छोटे बालक और वीर्य सेचनसमर्थ युवा तथा जो गर्भ में वीर्य सेचन किया है, उसको नष्ट मत करो। हमारे पिता, माता और प्रिय शरीरों का हिन्सन (नष्ट) मत करो। गाय, आदि पशु, घोड़ा, आदि उत्तम यान, हमारी सेना के शूर, यज्ञ करनेवाले, क्रोधित और रोषयुक्त होके कभी प्रवृत्त न हों। हे सर्वदैव ! हम लोग आपका आह्वान करते हैं। हे भगवन् रुद्र परमात्मन्! आपसे यही प्रार्थना है कि आप हमारी और हमारे पुत्र, धन-ऐश्वर्य, आदि की रक्षा करो।

(६) आयुर्यज्ञेन कल्पतां प्राणा यज्ञेन कल्पतां चक्षुर्यज्ञेन कल्पताꣳश्रोत्रं यज्ञेनकल्पतां वाग्यज्ञेन कल्पतां मनो यज्ञेन कल्पतामात्मा यज्ञेन कल्पतां ब्रह्मा यज्ञेन कल्पतां ज्योतिर्यज्ञेन कल्पताꣳस्वर्यज्ञेन कल्पतां पृष्ठं यज्ञेन कल्पतां यज्ञो यज्ञेन कल्पताम् स्तोमश्च यजुश्चऽऋक् च साम च बृहच्च रथन्तरञ्च स्वर्देवाऽअगन्मामृताऽअभूम प्रजापतेः प्रजाऽअभूम वेट् स्वाहा।। —[यजुर्वेद, अध्याय १८, मन्त्र २६]

अर्थ—(हे सर्वस्वामिन् ईश्वर ! जो यह आपकी आज्ञा है कि सब लोग सब पदार्थ मेरे अर्पण करें, इस कारण हम लोग-आयु, प्राण, आँख, कान, वाणी, मन, आत्मा, ब्रह्मा (वेद-विद्या और विद्वान्) ज्योति, सुख, पृष्ठ (पृथिवी, आदि सब लोकाधार) तथा पुरुषार्थ, यज्ञ (श्रेष्ठकार्य) स्तोम (स्तुति), ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, (वृहद्रथन्तर), महारथन्तर, इत्यादि सब पदार्थ आपके समर्पण करते हैं। हम लोग तो केवल आपकी ही शरण हैं। जैसी आपकी इच्छा हो आप वैसा ही हमारे लिए कीजिये। परन्तु हम लोग आपके सन्तान आपकी कृपा से उत्तम सुख को प्राप्त हों। हम जब तक जीवें, तब तक सदा चक्रवर्ती राज्यादि भोग से सुखी रहें और मरणानन्तर भी हम सुखी ही रहें। हे महादेवामृत ! हम लोग देव (परम विद्वान) हों तथा अमृत मोक्ष, जो आपकी प्राप्ति है उसको प्राप्त हों तथा अन्तर्यामी आप हृदय में आज्ञा कीजिये, अर्थात् हमारे हृदय में जैसा ज्ञान हो वैसा ही भाषण करें, इससे विपरीत कभी न करें। हे कृपानिधे ! हम लोगों का योग क्षेम (सब निर्वाह) सदैव आप ही करें। हमें आपके सहाय से सर्वत्र विजय और सुख मिले।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

(१०) अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानिदेव वयुनानि विद्वान् ।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नमऽउक्तिं विधेम ।।
—[यजुर्वेद, अध्याय ४०, मन्त्र १६]

अर्थ—हे सुख के दाता, प्रकाशस्वरूप सबको जाननेवाले परमात्मन् ! आप हमें श्रेष्ठ मार्ग से सम्पूर्ण प्रज्ञानों को प्राप्त कराइये और कुटिल पापाचरण को हमसे अलग कीजिये । इसलिए हम लोग नम्रतापूर्वक आपकी बहुत-सी स्तुति करते हैं कि आप हमें पवित्र करें ।

—डॉ० वेदप्रकाश प्राध्यापक,
हिन्दी विभाग, मेरठ कॉलेज, मेरठ ।
की कृति 'ईश्वर-उपासना
क्यों और कैसे ?' से साभार ।

निवेदन

वेद और दर्शनानन्द ग्रन्थ-संग्रह के संदर्भ में स्वामी जगदीश्वरानन्द जी के अगस्त ९५ वाले पत्र के क्रम में आपको यह सूचित करते हुए हमें प्रसन्नता होती है कि अब मूल वेद संहिताओं पर कार्य पूरा होने जा रहा है । स्वामी जी ने आश्वस्त किया है कि अप्रैल माह में वह हमें इस ग्रन्थ के पूर्ण कम्प्यूटर प्रिण्ट प्रकाशित करने के लिए दे देंगे ।

सामग्री प्राप्त होंते ही एक महीने के भीतर ग्रन्थ आप को प्राप्त हो जायेगा ।

हमें विश्वास है कि इस बार निश्चित कार्यक्रम के अनुसार कार्य सम्पन्न कर आपके अपूर्व सहयोग,सदाशयता एवं विश्वास के प्रति कृतज्ञतापूर्वक अपने कर्त्तव्य का निर्वाह करेंगे ।

आपसे निरन्तर प्राप्त सहयोग के लिए आभार सहित ।

—अजयकुमार

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हमारे प्रकाशन

महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती

आनन्द गायत्री कथा	१४.००
एक ही रास्ता	१२.००
शंकर और दयानन्द	८.००
मानव जीवन-गाथा	१३.००
सत्यनारायण व्रत कथा	६.००
भक्त और भगवान	१२.००
उपनिषदों का सन्देश	१८.००
घोर घने जंगल में	२२.००
मानव और मानवता	३२.००
प्रभु मिलन की राह	२०.००
यह धन किसका है ?	२२.००
बोध-कथाएँ	१८.००
दो रास्ते	१७.००
दुनिया में रहना किस तरह	१७.००
तत्त्वज्ञान	२२.००
प्रभु-दर्शन	१७.००
प्रभु-भक्ति	१२.००
महामन्त्र	१४.००
सुखी गृहस्थ	७.००
त्यागमयी देवियाँ	९.००

MAHATMA ANAND SWAMI

Anand Gayatri Katha	30.00
The Only Way	30.00
Bodh Kathayen	40.00
How To Lead Life?	30.00

महर्षि दयानन्द

व्यवहारभानु	४.००
स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश	१.५०
आर्योद्देश्यरत्नमाला	१.५०
पंचमहायज्ञ विधिः	८.००

स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती

सत्यार्थ प्रकाश	१२५.००
महाभारतम् (तीन खण्ड)	६००.००
वाल्मीकि रामायण	१७५.००
षड्दर्शनम्	१५०.००
चाणक्यनीति दर्पण	६०.००
विदुरनीतिः (हिन्दी-संस्कृत-अंग्रेजी)	४०.००
ब्रह्मचर्य गौरव	९.००
विद्यार्थियों की दिनचर्या	९.००
कुछ करो कुछ बनो	१२.००
मर्यादा पुरुषोत्तम राम	१२.००
आदर्श परिवार	१५.००
दयानन्द सूक्ति और सुभाषित	२५.००
वैदिक विवाह पद्धति	८.००
ऋग्वेद सूक्ति सुधा	२५.००
अथर्ववेद सूक्ति सुधा	१५.००
सामवेद सूक्ति सुधा	१२.००
ऋग्वेद शतकम्	१०.००
यजुर्वेद शतकम्	१०.००
सामवेद शतकम्	१०.००
अथर्ववेद शतकम्	१०.००
भक्ति संगीत शतकम्	६.००
चमत्कारी औषधियाँ	१५.००
घरेलू औषधियाँ	१५.००
चतुर्वेद शतकम् (सजिल्द)	५०.००
स्वर्ण पथ	१२.००
प्रभात-वन्दन	८.००
प्रार्थना-प्रकाश	८.००
शिवसंकल्प	८.००
प्रार्थना लोक (सजिल्द)	४०.००
वेद सौरभ	१२.००

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आचार्य उदयवीर शास्त्री

न्यायदर्शन भाष्य	१५०.००
वैशेषिकदर्शन भाष्य	१५०.००
सांख्यदर्शन भाष्य	१२५.००
योगदर्शन भाष्य	१००.००
वेदान्तदर्शन भाष्य (ब्रह्मसूत्र)	१८०.००
मीमांसादर्शन का विद्योदय भाष्य	३५०.००
सांख्यदर्शन का इतिहास	२५०.००
सांख्य सिद्धान्त	२००.००
वेदान्तदर्शन का इतिहास	२००.००
प्राचीन सांख्य सन्दर्भ	१००.००
वीर तरंगिणी (लेखों का संग्रह)	२५०.००

स्वामी विद्यानन्द सरस्वती

दीप्तिः	८०.००
आदि शंकराचार्य वेदान्ती नहीं थे	४०.००
सृष्टि विज्ञान और विकासवाद	४०.००
वेद मीमांसा	प्रेस में

पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय

शतपथ ब्राह्मण (तीन खण्ड)	प्रेस में
सन्ध्या : क्या, क्यों, कैसे	१५.००
विवाह और विवाहित जीवन	१८.००
जीवात्मा	४०.००
भगवत् कथा	१२.००

प्रो. सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार

ब्रह्मचर्य सन्देश	२५.००
वैदिक विचारधारा का वैज्ञानिक आधार	१५०.००

प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु

वैदिक ज्ञान-धारा	८०.००
महात्मा हंसराज	६०.००
महात्मा हंसराज ग्रन्थावली (१ खण्ड)	२४०.००
आर्य सूक्ति सुधा	१२.००

प्रो. नित्यानन्द पटेल

पूर्व और पश्चिम	३५.००
सन्ध्या विनय	६.००

डॉ. भवानीलाल भारतीय

बिखरे मोती	४०.००
कल्याण मार्ग का पथिक	प्रेस में
स्वामी श्रद्धानन्द ग्रन्थावली (११ खण्डों में)	६६०.००
आर्य समाज के बीस बलिदानी	१५..००
श्याम जी कृष्ण वर्मा	२४.००
आर्य समाज विषयक साहित्य परिचय	२५.००

स्वामी वेदानन्द सरस्वती

ऋषि बोध कथा	१०.००
वैदिक धर्म	२५.००

सुरेशचन्द्र वेदालंकार

ईश्वर का स्वरूप	प्रेस में
सहेलियों की वार्ता	२०.००

लेः देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय
अनुः पं. घासीराम

महर्षि दयानन्द चरित	२५०.००

क्षितीश वेदालंकार

चयनिका	१२५.००

पं. रामनाथ वेदालंकार

वैदिक मधुवृष्टि	६०.००

आ. प्रियव्रत वेदवाचस्पति

वेदोद्यान के चुने हुए फूल	५०.००

पं. चन्द्रभानु सिद्धान्ताभूषण

महाभारत सूक्ति सुधा	४०.००

पं. जगन्नाथ पथिक

सन्ध्या योग ब्रह्म साक्षात्कार	१२५.००

पं. विश्वनाथ विद्यालंकार

सन्ध्या रहस्य	२५.००

प्रो. रामविचार एम.ए.

आर्य समाज का कायाकल्प कैसे हो ?	४.००

पं. नन्दलाल वानप्रस्थी

गीत सागर	२५.००

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitized by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आचार्य उदयवीर शास्त्री

आचार्य शंकर का काल १०.००

पं. वीरसेन वेदश्रमी

याज्ञिक आचार संहिता ४५.००

वैदिक सम्पदा १७५.००

नरेन्द्र विद्यावाचस्पति

प्रेरक बोध कथाएँ १५.००

कवि कस्तूरचन्द

ओंकार गायत्री शतकम् ३.००

पं. सत्यपाल विद्यालंकार

श्रीमद्भगवद्गीता १५.००

WORKS OF SVAMI SATYA PRAKASH SARASVATI

Founders of Sciences in Ancient India (Two Vols.) 800.00

Coinage in Ancient India (Two Vols.) 600.00

Geometry in Ancient India 350.00

Brahmgupta and His Works 350.00

The Critical, Cultural Study of Satapath Brahman In Press

Speeches, Writings and Addresses

Vol.I : VINCITVERITAS 150.00

Vol.II : ARYA SAMAJ : A RENAISSANCE 150.00

Vol.III : DAYANAND : A PHILOSOPHER 150.00

Vol. IV : THREE LIFE HAZARDS 150.00

कर्म काण्ड की पुस्तकें

आर्य सत्संग गुटका ४.००

पंचयज्ञ प्रकाशिका ८.००

वैदिक संध्या १.००

सामाजिक पद्धतियाँ (मदनजीत आर्य) १२.००

संध्या-हवन-दर्पण (उर्दू) ८.००

Vedic Prayer in press

पं. वा. विष्णुदयाल (मॉरीशस)

वेद भगवान बोले १५.००

जीवनी

महात्मा आनन्द स्वामी (उर्दू) १०.००

महात्मा आनन्द स्वामी (हिन्दी) २५.००

त्रिलोकचन्द विशारद

महर्षि दयानन्द ५.००

गुरु विरजानन्द ५.००

स्वामी श्रद्धानन्द ५.००

धर्मवीर पं. लेखराम ५.००

मुनिवर पं. गुरुदत्त ५.००

स्वामी दर्शनानन्द ५.००

प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु

महात्मा हंसराज ४.५०

स्वामी स्वतन्त्रानन्द ४.५०

महात्मा नारायण स्वामी ५.५०

देवतास्वरूप भाई परमानन्द ५.५०

सुनील शर्मा

हमारे बालनायक ८.००

देश के दुलारे ९.००

हमारे कर्णधार ८.००

गिरती दीवारें १२.००

नीरू शर्मा

आदर्श महिलाएँ १०.००

पहली हार पहली जीत १२.००

स्वामी दर्शनानन्द

कथा पच्चीसी ९.००

बाल शिक्षा २.५०

डॉ. कृष्ण वल्लभ पालीवाल

वैदिक राष्ट्रीय ऋचाएँ १२.००

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हरिशचन्द्र विद्यालंकार

वैदिक शिष्टाचार	३.००

पं. रामगोपाल विद्यालंकार

दयानन्द चित्रावली	२५.००

ब्र. नन्दकिशोर

आचार्य गौरव	५.००

पं. नारायण स्वामी

प्राणायाम विधि	२.५०

सत्यभूषण वेदालंकार एम.ए.

नैतिक शिक्षा—प्रथम	२.५०
नैतिक शिक्षा—द्वितीय	३.००
नैतिक शिक्षा—तृतीय	४.५०
नैतिक शिक्षा—चतुर्थ	५.५०
नैतिक शिक्षा—पंचम	५.५०
नैतिक शिक्षा—षष्ठ	६.००
नैतिक शिक्षा—सप्तम	६.००
नैतिक शिक्षा—अष्टम	६.००
नैतिक शिक्षा—नवम	९.००
नैतिक शिक्षा—दशम	९.००

डॉ. मनोहर लाल

जीने का सही ढंग	१२.००

डॉ. देवव्रत आचार्य

योग शिक्षा-१	१२.००
योग शिक्षा-२	१०.००
योग शिक्षा-३	१०.००
योग शिक्षा-४	१०.००

चित्र

स्वामी दयानन्द १६" X २२" बहुरंगी	४.००
स्वामी दयानन्द (कुर्सी) १८" X २२"	३.००
स्वामी दयानन्द (आसन) १८" X २२"	३.००
स्वामी श्रद्धानन्द १८" X २२" एक रंग	३.००
गुरु विरजानन्द १८" X २२" एक रंग	३.००
पण्डित लेखराम १८" X २२" एक रंग	३.००
स्वामी दर्शनानन्द १८" X २२" एक रंग	३.००
गुरुदत्त विद्यार्थी १८" X २२" एक रंग	३.००
महात्मा हंसराज १८" X २२" एक रंग	३.००

जब प्रकृति की अनमोल दवाइयाँ आपको उपलब्ध हों तो पुड़िया आदि की क्या जरूरत है।

घर का वैद्य—प्याज	७.००
घर का वैद्य—लहसुन	७.००
घर का वैद्य—गन्ना	७.००
घर का वैद्य—नीम	७.००
घर का वैद्य—सिरस	७.००
घर का वैद्य—तुलसी	७.००
घर का वैद्य—आँवला	७.००
घर का वैद्य—नींबू	७.००
घर का वैद्य—पीपल	७.००
घर का वैद्य—आक	७.००
घर का वैद्य—गाजर	७.००
घर का वैद्य—मूली	७.००
घर का वैद्य—अदरक	७.००
घर का वैद्य—हल्दी	७.००
घर का वैद्य—बरगद	७.००
घर का वैद्य—दूध-घी	७.००
घर का वैद्य—दही-मट्ठा	७.००
घर का वैद्य—हींग	७.००
घर का वैद्य—नमक	७.००
घर का वैद्य—बेल	७.००
घर का वैद्य—शहद	७.००
घर का वैद्य—फिटकरी	७.००
घर का वैद्य—साग-भाजी	७.००
घर का वैद्य—अनाज	७.००
घर का वैद्य—फल-फूल	७.००
घर का वैद्य—धूप-पानी	१५.००

सभी छब्बीस पुस्तकें छः आकर्षक जिल्दों में भी उपलब्ध, कीमत ४५.०० रुपये प्रत्येक

घर का वैद्य (प्याज, लहसुन, गन्ना, नीम, सिरस)	
घर का वैद्य (तुलसी, आँवला, नींबू, पीपल, आक)	
घर का वैद्य (गाजर, मूली अदरक, हल्दी, बरगद)	
घर का वैद्य (दूध-घी, दही-मट्ठा, हींग, नमक, बेल)	
घर का वैद्य (शहद, अनाज, साग-भाजी, फल-फूल, फिटकरी)	
घर का वैद्य—धूप-पानी	४०.००

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हमारे अन्य प्रकाशन

स्वामी योगेश्वरानन्द

बहिरंग योग	७०.००
आत्मविज्ञान	८०.००
ब्रह्मविज्ञान	१००.००
दिव्य ज्योति-विज्ञान	६०.००
प्राण-विज्ञान	५०.००
दिव्य शब्द-विज्ञान	६०.००
निर्गुण ब्रह्म	३०.००
व्याख्यानमाला (५ भाग)	१५०.००
हिमालय का योगी-I+II	१५५.००
First Step to Higher Yoga	70.00
Science of Soul	80.00
Science of Divinity	100.00
Science of Divine Light	65.00
Science of Vital Force	40.00
The Essential Colourlessness of the Absolute	40.00
Science of Divine Sound	40.00
Beads of Sermons	30.00
Himalaya Ka Yogi-I+II	160.00

डॉ. कपिलदेव द्विवेदी

सुखी जीवन	१८.००
सुखी गृहस्थ	१२.५०
सुखी परिवार	१८.००
आचार-शिक्षा	१८.००
नीति-शिक्षा	१०.००
वेदों में नारी	२०.००
सुखी समाज	१८.००
वैदिक मनोविज्ञान	१८.००
यजुर्वेद सुभाषितावली	२५.००
सामवेद सुभाषितावली	२५.००
अथर्ववेद सुभाषितावली	३५.००
ऋग्वेद सुभाषितावली	४०.००
वेदों में आयुर्वेद	९०.००
Vedic Samdhya & Agnihotra	30.00
The Essence of The Vedas	200.00

महर्षि दयानन्द

Light of Truth	125.00
Aryoudeshya Ratanmala	10.00
सत्यार्थप्रकाश	५०.००
संस्कारविधि	१०.००
ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका	४०.००
उपदेश मञ्जरी	१०.००
संस्कृत वाक्य-प्रबोध	५.००
महर्षि दयानन्द (पं॰ लेखराम)	१००.००

पं॰ भगवद्दत्त

सविता देवता	५८.००
बृहस्पति देवता	६५.००

पं॰ रामनाथ वेदालंकार

सामवेद (पूर्व॰ उत्तरार्ध)	४००.००
सामवेद (संस्कृत भाष्य) (दो भाग)	७००.००
आर्ष ज्योति	५०.००
वेद-मञ्जरी	५०.००
वैदिक नारी	४०.००

आचार्य अभयदेव वेदालंकार

वैदिक उपदेशमाला	१०.००
वैदिक विनय	१२५.००

स्वामी समर्पणानन्द

पञ्चयज्ञप्रकाश	१५.००
श्रीमद्भगवद्गीता	२०.००

डॉ॰ सुरेन्द्रकुमार

विशुद्ध मनुस्मृति	८०.००
मनुस्मृति	१८०.००

Swami Satya Prakash Sarasvati

Rigveda (13 Vols)	2700.00
Athervaveda (5 vols)	1125.00
Samveda (2 vols)	1150.00
Yajurveda (1 vols)	500.00

स्वामी जगदीश्वरानन्द

देवर्षि दयानन्द चरित	२५.००
शुक्र नीतिसार	८०.००
सामवेद भाष्य	१००.००
बाल-शिक्षा	६.००

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

स्वाध्याय और अभ्युदय के लिए पठनीय दो ग्रन्थ

सन् १९९५ में **'सन्ध्या योग-ब्रह्म साक्षात्कार'** शीर्षक से ग्रन्थ सर्वप्रथम साधना और लगन से प्रस्तुत किया था । प्राचीन काल में कतिपय साधनाओं में गति प्राप्त करने के बाद तपःपूत ऋषियों ने ब्रह्म यज्ञ और वैदिक सन्ध्या के दिव्य अनुष्ठान की प्रणाली का विकास किया था । साधन समुच्चय और अष्टांग योग की वैज्ञानिक साधना द्वारा उसे किस प्रकार सिद्ध किया जा सकता है, जिससे क्लेश कर्मों का नाश कर अध्यात्म-आलोक की प्राप्ति सम्भव है । उसी की साधना समुच्चय को अष्टांग योग-प्रणाली के माध्यम से विस्तारपूर्वक अपनाने की पद्धति प्रस्तुत ग्रन्थ में एक निष्ठावान् उपासक की साधना के माध्यम से प्राप्त की जा सकती है ।

वैदिक वाङ्मय के आधार पर मानवीय जीवन और आचार को एक व्यवस्थित रूप देने के लिए वैदिक विद्वान् पण्डित वीरसेन वेदश्रमी के **'वैदिक सम्पदा'** शीर्षक ग्रन्थ में से एक जिज्ञासु साधक को अपने स्वाध्याय और अभ्युदय के लिए पर्याप्त ज्ञान-सामग्री उपलब्ध हो सकती है । इस ग्रन्थ में आत्मा-परमात्मा का बोध करने के लिए अध्यात्म की भूमिका मानव को समझनी चाहिए । उसके अध्ययन-मनन के बाद समाज-शास्त्र के सम्बन्ध में वैदिक पारिवारिक आदर्श प्रस्तुत किया गया है । वैदिक परिवार में गृहस्थ, परिवार की समस्याओं—गृहनिर्माण आदि की भूमिका प्रस्तुत करने के बाद स्वावलम्बन के लिए जीविका निर्वाह के लिए कृषि, उद्योग धन्धों, वन एवं यातायात की समस्याओं का चिन्तन किया गया है । वनों से औषधि, रोग ज्ञान, शल्य चिकित्सा, अर्थशास्त्र आदि विविध मानवीय कल्याण की चर्चा करने के बाद अर्थशास्त्र और राजनीति आदि सभी विषयों के उल्लेख के साथ शिक्षा विज्ञान, पदार्थ विज्ञान आदि की समस्याओं और उनका समाधान वैदिक सम्पदा ग्रन्थ के अनुशीलन से जिज्ञासु प्राप्त कर सकता है । आधुनिकतम ज्ञान-विज्ञान की तुलना में प्राचीन वैदिक सम्पदा का अध्ययन करने वाले जिज्ञासुओं के लिए ग्रन्थ उपयोगी है ।

यह प्रसन्नता की बात है १७ फरवरी, १९९६ को ऋषि बोधोत्सव के दिन इन दोनों ही अमूल्य ग्रन्थों का लोकार्पण हुआ है ।

समीक्षित पुस्तकें—

१. **सन्ध्यायोग-ब्रह्म साक्षात्कार :** *लेखक—ब्रह्मचारी जगन्नाथ पथिक,*
पृष्ठ संख्या २३९, मूल्य १२५ रुपये ।

२. **वैदिक सम्पदा :** *लेखक—श्री वीरसेन वेदश्रमी,*
पृष्ठ संख्या ४८०, मूल्य १७५ रुपये ।

दोनों ही ग्रन्थ सजिल्द हैं । दोनों के ही प्रकाशक हैं—

विजयकुमार गोविन्दराम हासानन्द, ४४०८, नई सड़क, दिल्ली-६ ।

स्वाध्याय और मानवीय अभ्युदय के जिज्ञासुओं के लिए दोनों ही ग्रन्थ पठनीय हैं ।

प्रकाशक-मुद्रक अजयकुमार ने सम्पादित कर अजय प्रिण्टर्स, दिल्ली-३२ में मुद्रित करा वेदप्रकाश कार्यालय, ४४०८ नई सड़क, दिल्ली से प्रसारित किया ।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi